आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 1 ★ मूल्य : 10 रु.
10 जनवरी, 2009 ★ पौष 2065

हिन्दी मासिक

# जिनवाणी

## नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
जयपुर

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ॥

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

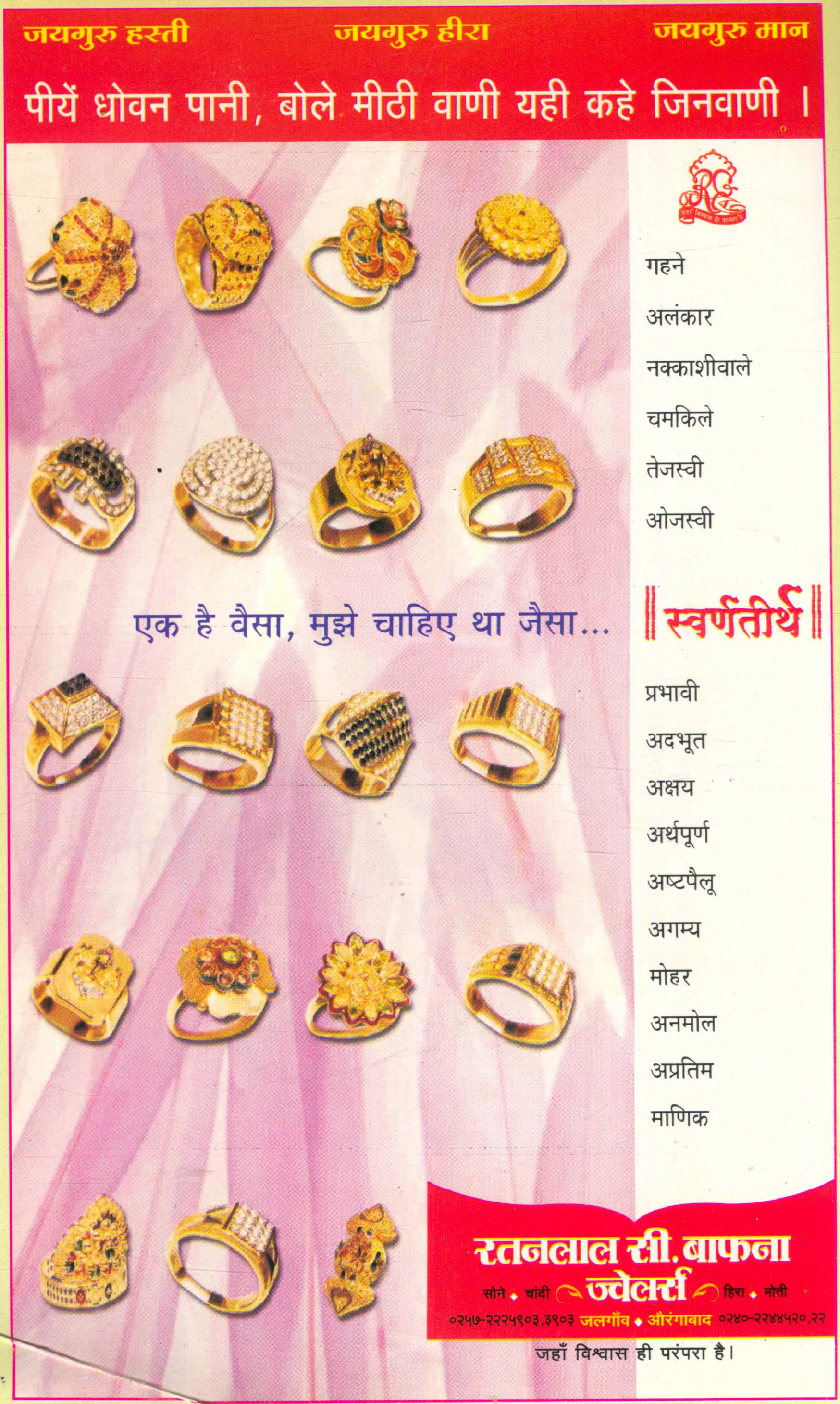
जयगुरु हस्ती
जयगुरु हीरा
जयगुरु मान
पीयें धोवन पानी, बोले मीठी वाणी यही कहे जिनवाणी ।
गहने
अलंकार
नक्काशीवाले
चमकिले
तेजस्वी
ओजस्वी
एक है वैसा, मुझे चाहिए था जैसा...
॥ स्वर्णतीर्थ ॥
प्रभावी
अदभूत
अक्षय
अर्थपूर्ण
अष्टपैलू
अगम्य
मोहर
अनमोल
अप्रतिम
माणिक
रतनलाल सी. बाफना
ज्वेलर्स
सोने • चांदी हिरा • मोती
०२५७-२२२५९०३,३९०३ जलगाँव • औरंगाबाद ०२४०-२२४४५२०,२२
जहाँ विश्वास ही परंपरा है।

# जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।


卐 संरक्षक

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन नं. 2636763

卐 संस्थापक

श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक

प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.),
फोन नं. 0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005, फोन नं. 0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक

नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त

रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं. RJ/JPC/M-07/2009-11

卐 सदस्यता

स्तम्भ सदस्यता-रू.11000/- संरक्षक सदस्यता-रू.5000/
वार्षिक सदस्यता- रू. 50/- त्रिवर्षीय सदस्यता- रू.120/-
आजीवन सदस्यता देश में - रू. 500/-
विदेश में- रू. 5000/- इस अंक का मूल्य रू. 10/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- रू. 2500/-


परस्परोपग्रहो जीवानाम्

सुत्तेसु यावी पडिबुद्धजीवी,
न वीससे पंडिए आसुपन्ने।
घोरा मुहुत्ता, अबलं सरीरं,
भारंडपक्खीव चरेऽप्पमत्तो[1] ।।6।।

— उत्तराध्ययन सूत्र 4.6

सुप्तजनों में भी ज्ञानी,
प्रतिबुद्ध भरोसा करे नहीं।
निर्बल शरीर, क्षण अतीव घोर,
भारण्डसम करे प्रमाद नहीं।।6।।


जनवरी 2009
वीर निर्वाण संवत् 2535
पौष 2065

वर्ष 66 अंक 1

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोनः 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।


नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो

# विषयानुक्रम


| | | | |
|---|---|---|---|
| सम्पादकीय - | गोधन से ग्रामों का विकास | -डॉ. धर्मचन्द जैन | 5 |
| अमृत-चिन्तन- | आगम-वाणी | -संकलित | 9 |
| | विचार-वारिधि | -आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. | 10 |
| प्रवचन- | इच्छाओं का निरोध तप है | -आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. | 11 |
| | भावनिक्षेप है अधिक महत्त्वपूर्ण | -उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. | 18 |
| शोधालेख- | क्या एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित करता है? | -श्री कन्हैयालाल लोढ़ा | 21 |
| तत्त्वज्ञान- | उपांगों में पुण्य तत्त्व (4) | -सुश्री नेहा चोरडिया | 29 |
| अंग्रेजी-स्तम्भ- | Mangala Sūtra | *-Dr. Priyadarshana Jain* | 39 |
| | Science of Dhovana-water(5) | *-Dr. Jeoraj Jain* | 35 |
| जीवन-व्यवहार - | Vegetarianism | *-Dr. Dharmendra Kankaria* | 51 |
| प्रासङ्गिक- | निर्ग्रन्थ परम्परा के उज्ज्वल नक्षत्रः आचार्य हस्ती | -श्री पारसमल चण्डालिया | 42 |
| | हे संयमधाम! हे प्रज्ञापुँज! | -मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. | 57 |
| विशिष्ट प्रश्नोत्तर- | उपासकदशांग सूत्र से पायें तात्त्विक बोध(14) | -संकलित | 49 |
| युवा-स्तम्भ- | नया वर्ष - नया संकल्प | - श्री दिलीप जैन | 63 |
| धारावाहिक- | जम्बूकुमार (56) | -जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा. | 66 |
| उपन्यास- | छाया (2) | -युवाचार्य श्री मधुकरमुनिजी म.सा. | 72 |
| नारी-स्तम्भ- | तनावमुक्ति का उपाय : परिश्रम | - डॉ. दिलीप धींग | 75 |
| स्वास्थ्य-विज्ञान- | स्वास्थ्यरक्षक व्यायाम 'स्वायसो' | - डॉ. चंचलमल चोरडिया | 77 |
| बाल-स्तम्भ- | क्षुल्लक कुमार को प्रतिबोध | - संकलित | 82 |
| विचार- | Sand & Stone | -Sh. Sanjay Srisrimal Jain | 38 |
| | वैराग्य | - अमृतवाणी से साभार | 48 |
| | परिग्रह का आदर | - आचार्यश्री विद्यासागर जी म.सा. | 65 |
| | समझौता | -साध्वी युगल निधि-कृपा | 94 |
| गीत/कविता | वाह! जिनवाणी वाह!! | - श्री जिनेन्द्र कुमार जैन | 48 |
| | जीना मुझे न आया | - श्री नगेन्द्र जैन "हैप्पी" | 81 |
| | हस्ती के पट्टधर हीरा | -श्री मगनचन्द जैन | 90 |
| संवाद- | समस्या-समाधान (19) | | 86 |
| प्रतियोगिता- | आओ स्वाध्याय करें त्रैमासिक प्रतियोगिता (20) | | 88 |
| स्वाध्यायी परिचय- | श्री नेमीचन्द जी कर्णावट | -मोहनकौर जैन | 91 |
| साहित्य समीक्षा- | नूतन-साहित्य | -डॉ. धर्मचन्द जैन | 93 |
| समाचार विविधा- | समाचार संकलन | | 95 |
| | साभार-प्राप्ति-स्वीकार | | 106 |

सम्पादकीय

# गोधन से ग्रामों का विकास

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

गोधन प्राचीनकाल में भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रहा है। स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी गाय का महत्त्व रहा है, किन्तु आज अवैधानिक रूप से हजारों लाखों गायें कत्लखानों का शिकार हो रही हैं तथा गायों की संख्या तेजी से घट रही है। उपासकदशांगसूत्र के अनुसार आनन्द श्रावक के पास 40 हजार गायें थीं। प्राचीनकाल में गाय का होना समृद्धि का सूचक था, क्योंकि जिसके पास गाय होती थी वह दूध, दही, घृत, छाछ आदि स्वास्थ्यवर्द्धक उत्पादों का सहज सेवन करता था तथा दूसरों के लिए भी उपलब्ध कराता था। गाय का दूध माँ के दूध का सर्वोत्तम विकल्प है तथा माँ का दूध जहाँ दो वर्षों तक ही सेवन किया जाता है वहाँ गाय के दूध का आजीवन सेवन किया जा सकता है। माता के पश्चात् गाय ही दुग्ध द्वारा हमारा पालन-पोषण करती है, इसीलिए गाय को भी माता मानकर उसे 'गोमाता' कहा गया है।

यद्यपि सरकार की ओर से गोवंश की तस्करी एवं उसके वध पर प्रतिबन्ध है तथापि गायों का कत्ल जारी है। गोवंश की संख्या में निरन्तर गिरावट आ रही है। भारतीय किसान को इस तथ्य से पुनः अवगत कराने की आवश्यकता है कि गाय गाँवों के विकास का मुख्य आधार बन सकती है तथा किसान की समृद्धि का हेतु हो सकती है। अतः वह गाय के बूढ़ी एवं अशक्त होने पर भी उसे न बेचे, अन्यथा वह कत्लखाने तक पहुँच जाएगी।

गाय के प्रमुख उत्पाद दूध के महत्त्व से हम सब परिचित हैं। इसके व्यापार-व्यवसाय से भी परिचित हैं। गोपालकों का यह कितना बड़ा सम्बल है, इसे भी हम जानते हैं, किन्तु गाय का शुद्ध दूध मिलना सुलभ नहीं है। कतिपय गोपालक इंजेक्शन लगाकर गायों का दूध निकालते हैं, इससे गायों का शोषण होता है। कुछ दूध में रासायनिक पदार्थ मिलाते हैं। कुछ तो ऐसे भी हैं जो पूरा दूध ही रासायनिक पदार्थों से तैयार करते हैं। दूध में पानी मिलाना अथवा गाय के दूध में भैंस का दूध मिलाना तो आमबात है। इससे गाय का शुद्ध दूध मिलना कठिन हो रहा है। फिर भी

दूध की माँग खूब बनी हुई। संगठित डेयरियों के माध्यम से भी दूध प्राप्त हो रहा है। आज पाश्च्युरेशन एवं पैकिंग की ऐसी प्रक्रिया विकसित हुई है जिससे दूध को कई दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। दुग्ध का व्यवसाय इस समय गोपालकों के जीवन का आधार ही नहीं, अनेकविध मिठाइयों के विक्रेता भी इससे आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी एवं समृद्ध बने हुए हैं।

स्वास्थ्य की दृष्टि से गोदुग्ध पूर्ण आहार है। इसमें प्रोटीन, विटामिन-ए, बी, सी, डी, ई, खनिज, वसा, कार्बोहाइड्रेट, एंजायम आदि स्वास्थ्यवर्द्धक तत्त्व विद्यमान होते हैं। गाय के दूध से कॉलेस्ट्रोल नहीं बढ़ता है। यह बुद्धि एवं स्मरणशक्ति के लिए भी उपयोगी होता है। दूध की महत्ता इसलिए भी अधिक है क्योंकि दही, छाछ एवं घृत भी दूध के ही उप-उत्पाद हैं। छाछ के लिए तो कहा जाता है कि भोजनोपरान्त जो छाछ का सेवन करता है वह कभी भी रोगग्रस्त नहीं होता। दही जमाकर बिलौने से तैयार किया गया मक्खन और घी स्वास्थ्य के लिए विशेष हितकारी है। आधुनिक चिकित्सक जहाँ हृदयरोगी को घृत सेवन का निषेध करते हैं, वहाँ आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गोघृत हृदय रोग को दूर करने वाला स्वीकार किया गया है। वहाँ घृत को ही आयु कहा गया है- 'आयुर्वै घृतम्'।

आर्थिक दृष्टि से विचार किया जाए तो ज्ञात होता है कि न केवल गाय का दूध, अपितु गोमूत्र एवं गोबर भी गोपालक को आर्थिक दृष्टि से समृद्ध बनाने एवं ग्रामों के विकास के लिए उपयोगी हैं। गोमूत्र से विभिन्न प्रकार की लाभदायक औषधियों का निर्माण किया जा सकता है। आज देश में गोमूत्र से आसवन, अर्क, वटी, शेम्पू, साबुन, कीटनाशक, फिनायल आदि तैयार किये जा रहे हैं। इनका निर्माण व्यापक स्तर पर करने के लिए गाँवों में छोटे-छोटे कुटीर उद्योग-धंधे स्थापित करने की असीम सम्भावनाएँ प्रतीत हो रही हैं। इन उद्योगों के द्वारा निष्पादित औषधियों का निर्यात भी सम्भव है। गोमूत्र से तैयार की गई औषधियाँ कैन्सर, ब्लडप्रेशर, हृदयरोग, मधुमेह आदि अनेक रोगों की प्रभावी चिकित्सा करने में समर्थ हैं। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता आदि आयुर्वेद ग्रन्थों में वर्णित है कि गोमूत्र विषनाशक, जीवाणु-नाशक, शक्तिवर्द्धक, शीघ्रपाचक, बल-बुद्धिप्रदायक, दीर्घायुप्रदाता, परम रसायन एक दिव्य द्रव है। गोमूत्र का सीधा भी प्रयोग किया जा सकता है। इससे अनेकविध रोगों का उपचार होने के साथ कोशिकाओं में सक्रियता एवं नूतनता बनी रहती है। वैज्ञानिक परीक्षणों से ज्ञात होता है कि गोमूत्र में

नाइट्रोजन, फास्फेट, सोडियम क्लोरीन, पोटेशियम, मैग्नीशियम, आइरन, मैंगनीज, विटामिन ए, बी, सी, डी, ई, एंजाइम्स, साल्ट, लेक्टोज, स्वर्णक्षार (एल्कली), क्रिएटिनिन, हारमोन्स, ताम्बा आदि अनेक खनिज तथा रसायन विद्यमान हैं। गोमूत्र से बनी औषधियों से एड्स पर भी नियन्त्रण पाया जा सकता है। टी.बी., अस्थमा, एग्जिमा, पथरी आदि रोगों पर भी गोमूत्र से बनी औषधियों से नियन्त्रण पाया जा रहा है। गोमूत्र कृषिभूमि की उर्वरता में वृद्धि करता है। वैज्ञानिकों ने गोमूत्र के सहयोग से बेटरी सेल का निर्माण कर घड़ी एवं केल्क्यूलेटर के प्रचालन का सफल प्रयोग किया है। यह भी देखने में आया है कि गोमूत्र के संयोग से निर्मित एण्टीबायोटिक दवाओं की उपचार क्षमता में 5 से 7 गुना वृद्धि हो जाती है। गोमूत्र की इन विशेषताओं से विदित होता है कि यह जहाँ अनेक साधारण एवं असाध्य रोगों की चिकित्सा में उपयोगी है वहाँ नये-नये कुटीर उद्योगों के माध्यम से भारत के गाँव के नवनिर्माण में भी उपयोगी है।

गोबर पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि इसका प्राचीन काल में खाद, ईंधन एवं घर की लिपाई-पुताई में विशेष उपयोग होता था, किन्तु अब वैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि इससे गाँवों में रोशनी देने के साथ यह कम्प्यूटर संचालन एवं ऊर्जा के बड़े स्रोत के रूप में भी उपयोगी है। जो किसान रासायनिक खाद के उपयोग से जमीन को बंजर होती देख रहे हैं, वे अब पुनः गोबर खाद की ओर अपना रुख कर रहे हैं। रासायनिक खाद ने किसान के भावी अर्थतन्त्र को झकझोर दिया है। डीजल और पेट्रोल के बढ़ते भाव के कारण ट्रेक्टर भी उसे भारी पड़ रहा है तथा कई किसान हताश एवं निराश होकर आत्महत्या की ओर अग्रसर हो रहे हैं। अब उन्हें वैज्ञानिक प्रयोगों के आधार पर विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि वे बाजार में मिलने वाली रासायनिक खाद के स्थान पर गोबर की खाद का उपयोग करें। गोबर की खाद से जमीन की उत्पादकता बढ़ेगी एवं रासायनिक खाद पर व्यय की जाने वाली राशि बचेगी। गोबर की खाद से वर्मी कम्पोस्ट खाद अथवा जैविक खाद का निर्माण कर इसकी शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। साधारण खाद से जैविक खाद दस गुना अधिक शक्तिशाली होती है। गाय के सींग का भी उपयोग जैविक खाद बनाने में किया जा सकता है।

गोबर खाद से उत्पन्न खाद्यान्न, सब्जी, फल आदि की देश-विदेश में अधिक कीमत प्राप्त होती है। इसलिए गोबर आर्थिक दृष्टि से गाय का महत्त्वपूर्ण

उत्पाद सिद्ध होता है। गोबर की खाद और गोबर के पाउडर के आधुनिक पैकेट बनाकर उन्हें निर्यात भी किया जा सकता है। गोबर के कण्डे थेप कर उनका ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है, उससे अवशिष्ट राख से बर्तन साफ किये जा सकते हैं। राख से बर्तन साफ किये जाने पर पानी की खपत नहीं होती। आज शहरी संस्कृति में पाउडर से बर्तन साफ कर पानी से धोया जाता है। इससे पानी का अपव्यय होता है। कण्डे की राख से कामधेनु मंजन का भी निर्माण किया जा रहा है, जो दाँतों के लिए पुष्टिकारक एवं मसूड़ों के लिए लाभदायक है।

गोबर का सबसे बड़ा उपयोग गोबर गैस संयंत्र में होता है। इससे ऊर्जा की प्राप्ति होती है। अनेक गाँवों में गोबर गैस संयंत्रों के माध्यम से बिजली का उत्पादन कर गाँवों को विद्युत की दृष्टि से स्वावलम्बी बनाया जा रहा है।

पंचगव्य के रूप में गोबर का उपयोग चिकित्सा में भी किया जाता है। दूध, दही, घृत, गोमूत्र और गोबर इनको मिलाकर पंचगव्य कहा जाता है। यह पंचगव्य विभिन्न प्रकार के असाध्य रोगों को दूर करने में सफल सिद्ध हो रहा है। ज्ञात हुआ है कि आयुर्वेदिक पंचगव्य औषधियों द्वारा उपचार करने का निःशुल्क अस्पताल गुजरात के बलसाड़ जिले के वागलदरा गाँव में प्रारम्भ हुआ है। यह अपने आप में इस तरह का प्रथम अस्पताल है तथा अब तक सैकड़ों लोगों को लाभान्वित कर चुका है। कैंसर जैसे रोगों की भी इस अस्पताल में चिकित्सा की गई है। जोधपुर की कन्हैया गौशाला में भी इस प्रकार के शिविर का गतवर्ष आयोजन हुआ था, जिसमें अनेक कैंसर रोगी लाभान्वित हुए थे।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने ठीक ही कहा है- "गाय लाखों, करोड़ों भारतवासियों का भरण-पोषण करने वाली माता है। इस देश में गोवंश ही मनुष्य का सच्चा साथी एवं उसकी अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा आधार है। गाय सिर्फ दूध ही नहीं देती, बल्कि सारी खेती का आधार स्तम्भ है। वह भारत की कामधेनु है।"

धार्मिक आस्था का बिन्दु हो, जीवन में नैतिकता के आचरण का सिद्धान्त हो, पर्यावरण की रक्षा का प्रश्न हो, प्रत्येक ग्रामीण के स्वास्थ्य के संरक्षण की समस्या हो, अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण का प्रसंग हो, सर्वत्र ग्राम-व्यवस्था के समुन्नयन हेतु गाय के महत्त्व को नहीं भुलाया जा सकता। अतः गाय के संवर्धन एवं संरक्षण की महती आवश्यकता है।

तत्त्व-चिन्तन

# आगम-वाणी

नो सद्द-रूव-रस-गंध-फासाणुवाई हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे?

आयरियाह-निग्गंथस्स खलु सद्द-रूव-गन्ध-फासाणुवाइस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा, कंखा वा, वितिगिच्छा वा, समुप्पज्जिजज्जा, भेयं वा लभेज्जा, उन्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा खलु नो निग्गंथे सद्द-रूव-रस-गन्ध- फासाणुवाई हविज्जा। दसमे बंभचेर-समाहिठाणे हवइ।।13।।

*-उत्तराध्ययन सूत्र, भाग-2, अध्ययन 16, सूत्र 13*

जो इन्द्रियों के विषय में आसक्त होते हैं नहीं।
निर्ग्रन्थ वह, यह क्यों, पुनः आचार्य बतलाते सही।।
जो शब्द, गन्ध, स्पर्श, रस और रूप में आसक्त है।
वह ब्रह्मव्रत से दूर हो, बनता विषय का भक्त है।।
फिर विवश इन्द्रिय हो रहे, ब्रह्मचारी के हृदय।
कांक्षा विसंशय और शंका स्वतः लेती है हृदय।।
अथवा नहीं तो ब्रह्मव्रत का पूर्ण होता नाश है।
यदि बच गया उससे कहीं, तो रोग या उन्माद है।।
या दीर्घकालिक रोग या, आतंक होता है उसे।
वह भ्रष्ट होता है जगत में, केवली के धर्म से।।
अतएव इन्द्रिय विवश जग, होवे न भूले संतजन।
निज ब्रह्मचर्य समाधि का, पालें नियम धर ध्यान मन।।13।।

**विवेचन** :- जितेन्द्रिय होना ब्रह्मचर्य की पहली शर्त है, जो शब्दादि पंच विषय कामगुणों का रसिक है, नाच-गान या रागवर्धक फिल्म और पिक्चर देखने का प्रेमी है, उसका ब्रह्मचर्य सुरक्षित नहीं रह सकता, इसलिए वीरशासन के साधकों को इस ओर पूरी तत्परता के साथ ध्यान रखना चाहिए। शास्त्रों में कहा है कि- "विणीयतण्हो विहरे सीइभूएण अप्पणो" व्रती साधक शब्दादि-कामगुणों की लालसा छोड़कर शीतलीभूत आत्मा से विचरण करे।

अमृत-चिन्तन

# विचार-वारिधि

*आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.*

- दुःख-मुक्ति का रास्ता यह है कि हित-मार्ग को जानो, पहचानो, पकड़ो और तदनुकूल आचरण करो।
- धन के बीच अनासक्त रहने वाला चिन्तित नहीं होता, किन्तु जो माया का नशा कर लेता है, उसको सदा चिन्ताएँ घेरे रहती हैं।
- यदि इन्कम के पीछे पाँच या दस टका भार हल्का करने की मन में आवे और आसक्ति तथा राग कम हो तो मैं कहता हूँ कि आसक्ति कम होते ही आपका रोग और शोक भी कम हो जाएगा।
- धन बढ़ने के साथ-साथ चिन्ता बढ़ने से रोग बढ़ता है, इसलिए आप लोग यह समझें कि जो धन मेरे पास है वह मेरा नहीं है, मैं तो एक ट्रस्टी हूँ, संरक्षक हूँ।
- सामायिक, पौषध, संवर आदि निज के कर्म काटने के साधन हैं।
- दान के माध्यम से समाज के योग्य क्षेत्र में संवितरण किया जाता है।
- दान करने वाले का पैसे पर ममत्व कम रहेगा, तो शोक-संताप कम होगा, बीमारी कम होगी।
- वचन की महिमा वक्ता की योग्यता पर आधारित होती है।
- मन से जिनके विकार निकल गये वे श्रमण हैं, सुमन हैं।
- शिष्य गुरु के सामने दिल खोलकर बात कर सकता है। वह शिष्य नहीं जो गुरु से खुले मन बात नहीं करे।
- उत्तम पुरुष प्रणिपात के बाद क्रोध नहीं रखते।
- जघन्य आदमी दीर्घद्वेषी होता है। जब तक वह एक-एक गाली के बदले में दस गाली नहीं दे दे, तब तक शान्त नहीं होता।
- निश्चल भाव से प्रभु के साथ सम्बन्ध जोड़कर आगे बढ़ने का प्रयास करोगे तो अवश्य कल्याण के भागी बनोगे।
- सर्वार्थसिद्ध विमान के देवता सम्पदा और वैभव के कारण सुखी नहीं हैं वरन् वे सुखी हैं पौद्गलिक कामना कम होने के कारण। वे उपशान्तभाव में रहने वाले हैं। उनमें क्रोध, मान, माया, लोभ अति मन्द दशा में हैं।
- तन और वाणी से तो क्रिया होती रहे और मन कहीं अन्यत्र भटकता रहे, उसे द्रव्य-क्रिया समझिए।

**-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार**

प्रवचन

# इच्छाओं का निरोध तप है

*आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.*

**आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के द्वारा श्री आदिनाथ स्थानकवासी जैन भवन, पूना में दिनांक 3 मई, 2003 को फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतन मेहता द्वारा किया गया है।-सम्पादक**

संयम-तप की साधना से आठों कर्मों का अन्त कर निरंजन-निराकार स्वरूप प्राप्त करने वाले सिद्ध भगवन्तों को, अनन्त ज्ञानी-अनन्त दर्शनी अरिहन्त भगवन्तों को तथा साधना से सिद्धि की ओर कदम बढ़ाने वाले महाव्रत-समिति-गुप्ति के आराधक सन्त-भगवन्तों को कोटि-कोटि वन्दन!

संसार का प्रत्येक प्राणी सिद्धि, सफलता प्राप्त कर शिखर पर चढ़ना चाहता है। संसार का कोई प्राणी दुःख, वेदना, पीड़ा और भटकाव नहीं चाहता। नहीं चाहते हुए भी भटकाव का एक मात्र कारण है- आत्मा के साथ जुड़े हुए कर्म। कर्मों के कारण गति, योनि और भिन्न-भिन्न स्थानों पर भटकाव हो रहा है, जिसको रोकने का हमने उपाय नहीं किया।

बिना कारण के कार्य नहीं होता। भटकना जीव का स्वभाव नहीं है। अगर भटकना जीव का स्वभाव होता तो सिद्ध भगवन्त भी भटकते। सिद्ध अचल हैं, ध्रुव हैं, शाश्वत स्थान पर स्थिर होकर विराजमान हैं। संसारी जीव भटक रहे हैं, उसका कारण कर्म है। उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है-

जहा महातलायस्स, सण्णिरुद्धे जलागमे।
उस्सिंचणाए तवणाए, कमेणं सोसणा भवे।।

**उत्तराध्ययन सूत्र 30.5**

इस कर्म रूप पानी को समाप्त करने के लिए दो उपाय आवश्यक हैं। पहला- आने का मार्ग बन्द किया जाय। दूसरा- जो संचित है उसे बाहर निकाला जाय। आवक रोकने के लिए संवर है, सामायिक है, प्रत्याख्यान है। ये नये आने वाले कर्मों के पानी को रोकने का काम करते हैं। जितना-जितना संवर होगा उतनी-उतनी मात्रा में पानी की आवक कम होगी। संचित कर्म रूप जल को दो तरह से क्षय किया जा सकता है। एक भोगकर निकाला जाता है।

दूसरा तपाकर उड़ाया जाता है। तपाकर उड़ाने वाले दीर्घ तपस्वी तीर्थंकर भगवन्त आदिनाथ का आज तप-दिवस है। चैत्र बदी नवमी को दीक्षा ग्रहण करके आदिनाथ भगवान् एक से दूसरे, दूसरे से तीसरे घर भिक्षाचरी के लिए जाते हैं। गाँव-गाँव, नगर-नगर, भिक्षाचरी के लिए प्रयत्न करते हुए भी लोगों की अनभिज्ञता के कारण साधु को क्या देना चाहिये, कैसे देना चाहिये उसकी जानकारी नहीं होने से एक वर्ष से ऊपर का समय बीत जाता है, वे अन्न-जल ग्रहण नहीं कर पाते। इस प्रकार एक कारण अनभिज्ञता है। मैं दूसरा कारण सामने रख रहा हूँ। युगल धर्म को समाप्त कर कर्मभूमि में आये पुरुषों ने आदिनाथ के प्रति अत्यधिक श्रद्धा के कारण कि ये हमारे पालक हैं, नरेश हैं, परम उपकारी हैं, ऐसे महापुरुष के चरणों में रोटी-पानी की बात क्या की जाय, इसलिये घर में जो उत्तम वस्तु है चांदी है, सोने की चीज है, रत्नों की है, कोई विशिष्ट वस्तु है, वे सब चीजे बहरावें। मेरा खयाल है उससे ज्यादा अनभिज्ञता आज शहरों में है। शंहरी लोगों में श्रद्धा है, पर जानकारी नहीं है। कई घरों में गोचरी के लिए जाते हैं वहाँ कुछ जगह सुनने को मिलता है- "महाराज! आप पधार गये, पर स्थानक से सूचना नहीं आई। बिना सूचना आप कींकर पधारिया?" क्या संत सूचना करके आते हैं?

आज जानकारी नहीं है। प्रतिक्रमण जानने वाले लोगों ने करना छोड़ दिया, सीखने वाले भी कम रह गये हैं। आज तो प्रायः संवत्सरी का प्रतिक्रमण ध्यान में रहता है। उस दिन प्रतिक्रमण में जायेंगे और जोर से 'मिच्छामि दुक्कडं' कह देंगे। प्रतिक्रमण में पाठ है- बुलायां आवे नहीं, नेतियां जीमे नहीं। अपने लिये बनाया लेवे नहीं। ये सब किसके लिए? शायद वे सरल लोग थे, इसलिये उनको जानकारी नहीं थी। आज भी किसी के मन में अश्रद्धा का भाव नहीं है। महाराज अगर घर से खाली चले जायें तो रंज होता है, लेकिन युगलिक पुरुष विधि के जानकार नहीं थे। आपको जानकारी है या नहीं?

आप शायद कभी सोचते हैं कि महाराज तो पहले भी आये। चातुर्मास हो गये, लेकिन वे पानी लेने नहीं आये। शायद महाराज को पानी की जरूरत नहीं रही। आपको जरूरत है, आप पधारिया हो तो थोड़ी देर रुको, मैं अभी बना देती हूँ। श्रद्धा में आज भी कमी नहीं है। आपके मन में यह भी भाव

नहीं कि मैं न दूँ। वस्तु नहीं है, ऐसा भी नहीं। सम्यक् जानकारी के अभाव में भगवान ऋषभ देव को अच्छी वस्तु देने की सोचते हैं, लेकिन भगवान को निर्दोष आहार-पानी नहीं मिला। सब चिन्तित हैं। वहाँ के राजा से लेकर प्रजा का हर व्यक्ति चिंतित है कि ये अणगार रोज आते हैं और खाली चले जाते हैं। न कुछ कहते हैं, न मांगते हैं, न लेते हैं, इसलिए इनका शरीर सूखता जा रहा है।

तप क्या? आज तप का दिन है। तप कैसे करना? तप की विधि क्या, इस पर थोड़ा कहने की भावना है। भारत भूमि पर कैसे-कैसे तपस्वी हुए हैं, यह बात समय के साथ रखने की कोशिश करूँगा।

आजकल तप की परिभाषा में अधिकतर अनशन की बात कही जाती है। एकाशन, आयंबिल भी तप है, उपवास-बेला-तेला-अठाई भी तप है। अनशन चाहे वह उपवास हो, बेला हो, तेला हो, अठाई हो, मासखमण हो तप कहा जाता है, पर भगवान् महावीर ने तप की सुन्दर व्याख्या की है-

तप्यन्ते कर्माणि येन तत् तपः।

हमारी जिस विचारधारा से, चिन्तन से, आचरण से कर्म तपाये जाते हैं, वह तप है।

तप का उद्देश्य क्या? तप प्रसिद्धि के लिए नहीं है। तप अपने-आपको ऊँचा बताने के लिए भी नहीं है। तप मात्र शरीर को तपाकर हड्डी-हड्डी निकालने के लिए भी नहीं है। आचार्य उमास्वाति ने कहा-

इच्छानिरोधस्तपः।

इच्छा का निरोध तप है। जितना इच्छाओं का निरोध किया जाता है उतना तप है। ऊणोदरी भी तप है। रसपरित्याग भी तप है। मन आस्रवद्वार में चला गया, उसका प्रायश्चित्त कर लेना भी तप है। ज्ञानियों-गुणियों के सामने विनय का प्रदर्शन भी तप है।

कुछ कहते हैं- महाराज क्या करें हमसे तो तप होता नहीं, ये करते हैं इसलिए हम इनके तप की अनुमोदना करने आये हैं। आप धन्य-धन्य कह देते हैं, पर मेरे खयाल में आपने तप का स्वरूप समझा नहीं है। तप हर व्यक्ति कर सकता है। मैं आचार्य भगवन्त की भाषा में श्रावक की परिभाषा करके चलूँ।

भगवन्त ने श्रावक के तीन दर्जे जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट कहे हैं। जघन्य कौन? कल कह गया- मात्र जैन कुल में श्रावक के घर में जन्म लेने से जैन नहीं होता। आपमें किसी के घर बच्चा हुआ तो घर वाले हमको आकर कहते हैं- "बाबजी! आपके एक ओर श्रावक आ गया।" जैसे ब्राह्मण को द्विजन्मा कहा जाता है, पक्षी को द्विजन्मा कहा जाता है ऐसे ही साधु और श्रावक भी द्विजन्मा होते हैं। पक्षी का जन्म दो बार होता है। एक अण्डे से और दूसरा जब वह अण्डा फोड़कर बाहर आता है तब। एक ब्राह्मण जन्म से और दूसरा जनेऊ संस्कार से होता है। श्रावक का जन्म भी दो बार होता है। एक जन्म के साथ और दूसरा संस्कारों के साथ। साधु भी जब दीक्षित होता है तब दूसरा जन्म होता है।

हाँ, तो जघन्य श्रावक कौन?

आउट्टी थूल-हिंसाइं मज्जमंसाइं चाइयो।
जहन्नओ सावओ होइ, जो नमुक्कारधारओ।।

आचार्यों ने परिभाषा की- जो इरादा पूर्वक त्रस प्राणियों की हिंसा नहीं करता, मद्य-मांस का त्याग करता है और जिसकी देव अरिहन्त गुरु निर्ग्रन्थ और केवली भाषित धर्म में श्रद्धा होती है, जो नमस्कारमन्त्र को धारण करता है वह जघन्य श्रावक होता है।

मध्यम श्रावक कौन? तो कहा-

देवार्चा, गुरुशुश्रूषा, स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानं चेति गृहस्थानां षट् कर्माणि दिने दिने।।

शरीर के संरक्षण के लिए छः काम किये जाते हैं-खाना, पीना, सोना, वस्त्र परिवर्तन करना एवं मल-मूत्र का त्याग करना। ये छः कर्म शरीर स्वस्थ रखने के लिए आवश्यक हैं। जैसे शरीर के लिए छः आवश्यक कार्य हैं ऐसे ही आत्मा के लिए भी छः कर्म बताये हैं। वे हैं- देव-भक्ति, गुरु-सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप और दान। निद्रा से जागरण के साथ वह अपने इष्ट का स्मरण करता है। वह इष्ट का स्मरण यह समझ कर करता है- सिद्धां जैसो जीव है जीव सो ही सिद्ध होय। भगवन्! जो आपका स्वरूप है वही मेरा है। आपमें अनन्त ज्ञान है, अनन्त दर्शन है, अनन्त सुख है, इसी तरह मेरे भीतर भी

अनन्त ज्ञान है, दर्शन है, सुख है। पर मैं कर्मों से बंधा हुआ हूँ। वह सूरज कब उदय होगा, जब मैं इन कर्मों का अन्त करूँ। भूखा जैसे चिन्तन करता है कि मुझे बढ़िया भोजन मिल जाय इसी तरह सम्यक् दर्शनी भी चिंतन करता है कि मैं ज्ञान-दर्शन-चारित्र में प्रगति का कोई अवसर व्यर्थ न जाने दूँ। वह अवसर का उपयोग तब कर सकेगा जबकि उसके सामने कोई आदर्श होगा। विद्यार्थी के सामने शिक्षक, व्यापारी के सामने धनिक जैसे आदर्श रहता है वैसे ही सम्यक् दृष्टि चिन्तन करता है कि भगवान् भी मानव थे, मैं भी मानव हूँ। उन्होंने इसी मनुष्य में केवल ज्ञान-केवल दर्शन प्राप्त किया, मैं भी केवलज्ञान-केवलदर्शन प्राप्त कर सकता हूँ। इसके लिए वह स्मरण करता है। महामंत्र नवकार का ध्यान करता है।

देव-भक्ति के बाद है गुरु-सेवा। मैं अनुभवी संत भगवन्तों के चरणों में जाकर वीतराग वाणी का श्रवण कर मोक्ष-मार्ग का स्वरूप समझूँ। श्रावक जहाँ जिज्ञासा के साथ गुरु से समाधान प्राप्त करता है वहीं उसे निर्दोष सेवा करनी चाहिए। सेवा सेवा में भी अन्तर है। कोई साधु चरस खाने वाला है, कोई भांग पीने वाला है, कोई शराबी है तो कोई अफीमची है उनको कुछ देकर भी सेवा गिनाई जाती है, पर वह सेवा, सेवा नहीं है। कई भक्त हैं जो कहते हैं- बाबजी! मेरे लायक कोई सेवा हो तो बताना। आपको दवा चाहिये तो मैं उसका प्रबन्ध कर दूँगा। अन्य कोई आवश्यकता है तो उसकी पूर्ति भी संभव है। सेवा निर्दोष होनी चाहिये। सेवा चाहे आहार-पानी की हो, स्थान की हो, औषध-भैषज की हो, किन्तु वह निर्दोष हो। गुरु हो तो गुरु की सेवा करे और गुरु नहीं हो तो स्वाध्याय-संयम और तप करे। प्रतिदिन अनशन के माध्यम से तप नहीं किया जा सकता।

तप क्या? 'इच्छानिरोधस्तपः' इच्छा का निरोध तप है। इच्छा और आवश्यकता अलग-अलग हैं। इच्छा और आवश्यकता में जमीन आसमान का अन्तर है। दोनों में भेद-रेखा है। आवश्यकता की पूर्ति हर व्यक्ति की होती है। लेकिन इच्छा की पूर्ति आजतक न किसी की हुई है, न होगी ही। खाने के लिए रोटी चाहिये, मिलेगी। पेट भरने के लिए सामग्री सबके लिए उपलब्ध है, किन्तु इच्छा की पूर्ति संभव नहीं। गर्मी में ठण्डा चाहिये, रबड़ी

चाहिए, लड्डू चाहिए, केशर मिला दूध चाहिए, दूध में घी का छांटा चाहिए ये सब आवश्यकता नहीं, इच्छाएँ हैं। भूख होने पर रोटी की आवश्यकता है, प्यासे को पानी चाहिये, पर ठण्डा पानी चाहिये, फ्रीज का पानी चाहिये यह इच्छा है और इच्छा है तो वह बढ़ती जायेगी, घटने का काम नहीं। कल तक छाछ से सन्तोष करने वाले थे, आज न जाने कितने-कितने पेय हैं फिर भी संतोष नहीं। आज के ये पेय जिन्हें आप कोका-कोला, थम्स-अप और न जाने क्या-क्या कहते हैं इनके सेवन से शरीर गलता है। लज्जा निवारण के लिए वस्त्र चाहिये, यह आवश्यकता है, पर रोजाना धोबी का धोया हुआ हो, अमुक डिजायन का हो, ऐसा हो, वैसा हो ये इच्छाएँ हैं। शरीर के लिए कपड़ा चाहिए। आधी धोती पर जीवन चलाने वाले गोल्ड मेडलिस्ट जौहरीमल जी पारख कहते थे कि मेरी भतीजी के तैंतीस ड्रेसें हैं, जैसी ड्रेस है उसकी मेंचिग की चप्पलें हैं। आज मेंचिग का बड़ा रोग है। जैसी साड़ी है बिन्दी भी उसी रंग की ब्लाउज भी वैसा, तो जूते भी वैसे। लाल है तो सब लाल, हरी है तो सब हरी। नेल पालिस भी वैसी, होठ पॉलिस भी वैसी, बस अन्तर है तो यह कि मुँह वैसा नहीं है।

यहाँ जो तपस्वी बैठे हैं वे अपना जरा निरीक्षण करें कि मैंने तप का रिकॉर्ड किया है या इच्छाओं को जीता है। अगर तप करते-करते सहनशीलता बढ़ रही है तो ठीक है और यदि नखरे बढ़ रहें हैं तो वह तप लाभ का कारण नहीं हो सकता है। आप मन में अपने आपको तपस्वी मान लीजिये, किन्तु जब तक इच्छाओं का निरोध नहीं तो तप नहीं। व्यक्ति हर रोज तप कर सकता है। आज एक आसन पर बैठूँगा यह भी तप है। आज एक कपड़ा काम में लूँगा यह भी तप है।

मैं संतों के लिए भी कहूँ आवश्यकता से अधिक लेना संयमी को शोभा नहीं देता। हमें लेना पड़ता है। लेने में भी निर्दोषता प्रधान है। श्रावक संतों की सेवा करना चाहते हैं, आप सेवा करें। अपने घर पर अपने लिए जो कुछ बनाया है वह चाहे खाखरा भी है निर्दोष है तो उसे देना सेवा है। चंदनबाला ने अपने लिए मिले उड़द के बाकले दिए। वह दिया गया बंधन तोड़ने वाला बना। महत्त्व भावना का है। वस्तु निर्दोष चाहिये। धोवन पानी

देकर महाराज शंख ने तीर्थंकर गोत्र बांध लिया। दान में निर्दोषता चाहिए भावना की उच्चता चाहिए। आप संतों को निर्दोष आहार-पानी देना चाहते हैं तो स्वयं वैसा काम में लें। आप धोवन पानी पीयेंगे तो संतों को सहज बहरा सकेंगे। पीयेंगे नहीं तो पहले तो घर में धोवन बनेगा नहीं और बनेगा भी तो संतों के निमित्त से। यह निर्दोष नहीं है। कभी-कभी संत भिक्षा के लिए जाते हैं तब सुनाई पड़ता है जल्दी कर, नहीं तो महाराज खाली चले जायेंगे। आप यदि यह नियम कर लो कि बारह महीने हम कच्चा पानी नहीं पीयेंगे तो यह स्थिति नहीं होगी। धोवन सहज सुलभ हो जाएगा।

तप करने वाले आज भी हैं। मुम्बई में 3200 एकान्तर तप चल रहे हैं। संत कभी भी चले जायें धोवन पानी गर्म पानी सहज मिल जाएगा। उन्हें यह नहीं कहना पड़ता कि महाराज! वापस पधारजो।

आपके लिए इच्छाओं का निरोध है हमारे लिए निर्दोषता का प्रावधान है। आप इच्छाओं का निरोध करेंगे वह तप हो जाएगा। माता त्रिशला गर्भवती हुई तो उसने तेज चलना, गर्म खाना छोड़ दिया। क्यों? वह पहले घूमती थी, पर बच्चे की रक्षा के लिए उसने तेज चलना तक छोड़ दिया। आपको टी.वी. देखने की आदत है, पर गर्भस्थ शिशु पर गलत संस्कार नहीं जमें, इसलिए टी.वी. देखना बन्द कर दें। संत भगवन्त विराज रहे हैं, कच्चा पानी नहीं पीयेंगे तो आपको लाभ होने के साथ सच्ची सेवा भी हो सकेगी। शायद युगलिक धर्म वालों को श्रेयांस ने समझा दिया, परदेशी राजा को चित्त प्रधान ने समझा दिया, आप क्या समझे हैं अपना चिन्तन कीजिए। जो तप कर रहे हैं उन्हें धन्यवाद दें, उनके तप की अनुमोदना करें। करने वाले एक-दो वर्षों से नहीं कोई दस वर्षों से, कोई पच्चीस वर्षों से, तो कोई तैयालीस वर्षों से एकान्तर कर रहे हैं। आपको कभी एक समय नाश्ता छोड़ना पड़े तो वह भी भारी लगता है, परन्तु छोड़ना तप है। मैं कैसे-कैसे लोगों की बात कहूँ- हृदय रोग है, फिर भी एकान्तर चल रहा है, श्वास की शिकायत है फिर भी तप चालू है, उनको कितना सहन करना पड़ रहा है।

आज तप-दिवस के उपलक्ष्य में महारम्भ छोड़िये। तप छोटा भी क्यों न हो, वह संचित कर्म को क्षय करने वाला है। आप जितना-जितना तप में पुरुषार्थ करेंगे कर्म-निर्जरा करते हुए सिद्धि की ओर बढ़ सकेंगे। ■

प्रवचनांश

# भावनिक्षेप है अधिक महत्त्वपूर्ण

*उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.*

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के द्वारा जोधपुर के चौपासनी हाउसिंग बोर्ड के16 वें सेक्टर में स्थित श्री जैन रत्न स्वाध्याय भवन में दिनांक 27.02.1997 को फरमाए गए प्रवचन के इस अंश का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतन मेहता द्वारा किया गया है। - **सम्पादक**

हम जिस सिद्धान्त या जिस वस्तु को, उसके रूप-स्वरूप को ठीक-ठीक समझना चाहते हैं, उस सिद्धान्त या वस्तु का नाम, स्थापना आदि के रूप में विचार करना निक्षेप क़हलाता है। निक्षेप के चार भेद हैं- नाम-निक्षेप, स्थापना निक्षेप, द्रव्य-निक्षेप और भाव-निक्षेप।

नाम-निक्षेप में वस्तु के गुणानुसार यदि नाम रखा जाता है तो वह यथार्थ नाम-निक्षेप है। चेतनायुक्त होने से चेतन, जीवित रहने से जीव, प्राणों को धारण करने से प्राणी आदि यथार्थ नाम-निक्षेप हैं। तीर्थंकर प्रभु श्रावक, श्राविका, साधु, साध्वी रूप चार तीर्थों की स्थापना करते हैं, अतः तीर्थंकर उनके लिए यथार्थ नाम है। इसके विपरीत जिसका मरना निश्चित है, परन्तु नाम 'अमर' रखते हैं। घूम-घूम कर कागज व गोबर एकत्रित करने वाली महिला का नाम 'लक्ष्मी' रखते हैं। ये अयथार्थ नाम निक्षेप में आते हैं।

स्थापना निक्षेप में जिसकी आकृति है उस नाम से उस मूर्ति को पहचान दी जाती है। देवी-देवताओं की मूर्तियों पर मालीपन्ने लगा दिए जाते हैंऔर जैसी उनकी आकृति वैसी ही स्थापना हो जाती है। लोग भी कहते हैं- ये गणेश जी हैं, ये शिवजी हैं, ये हनुमान जी हैं। शतरंज खेलते समय आकृति नहीं होते हुए भी काष्ठ या प्लास्टिक के विभिन्न टुकड़ों को हाथी, घोड़े, ऊँट, पैदल आदि कहा जाता है। यह स्थापना निक्षेप है।

द्रव्य निक्षेप में किसी पदार्थ की भूतकालीन अथवा भविष्यकालीन पर्याय को वर्तमान काल में व्यवहृत कर लिया जाता है। जो जीव भूतकाल में

देव था, उसे द्रव्य-देव कहा जा सकता है। यदि भविष्य में आने वाले भव में देव बनेगा तो उसे भव्य द्रव्य-देव कह सकते हैं।

किसी माता ने तीर्थंकर को जन्म देने योग्य चौदह स्वप्न देखे, तीर्थंकर की तरह ही जन्म से केवलज्ञान प्राप्ति तक उस जीव ने कार्य किए, पर चार तीर्थ की यदि स्थापना नहीं की तो वह तीर्थंकर नहीं हो सकता। इसे हम भाव निक्षेप कहेंगे।

भावनिक्षेप में व्युत्पत्ति निमित्त एवं प्रवृत्तिनिमित्त दोनों अर्थ पूरी तरह घटित होते हैं अर्थात् जिस पदार्थ में जो पर्याय वर्तमान में विद्यमान है, तदनुसार कहना भाव निक्षेप है।

जैन धर्म नाम, स्थापना एवं द्रव्य निक्षेपों को सिद्धान्ततः व्यवहृत अवश्य करता है, किन्तु महत्ता की दृष्टि से भाव-निक्षेप को ही प्रमुखता है। किसी सद्गृहस्थ को संसार से विरक्ति हुई। वैरागी बन गया। संतों के साथ रहकर ज्ञान, ध्यान, आचरण सीख रहा है। दीक्षा लेने की भावना बलवती है। चौबीसों घंटे मुँहपत्ति लगाए रखता है, दुपट्टा-चोलपट्टा भी रखता है, बाल-दाढ़ी-मूँछ भी सफाचट रखता है, गृहस्थों के घर से गोचरी लाकर खाता है, पर जब तक दीक्षा ग्रहण नहीं कर लेता, वह वन्दनीय नहीं होता। दीक्षा लेने के पश्चात् भी यदि वह शुद्ध साधु-धर्म का पालन नहीं करता, भीतर में रही क्रोधादि कषायों पर विजय प्राप्त नहीं करता तो वेश भले ही साधु का हो, पर सर्वज्ञों की दृष्टि में वह साधु नहीं होता, कर्म उसके साधु-समान नहीं होते। कई बार ऐसे त्यागी, संत, महात्मा भी देखने एवं सुनने में आते हैं। एक बार कोई दिगम्बर-मूर्तिपूजक साधक दिगम्बर तेरापंथियों के मन्दिर में पधारे। वहाँ प्रभु की मूर्ति की पूजा-उपासना की और अपने नियम के अनुसार प्रभु-मूर्ति के चरणों में पुष्प समर्पित किए। उन साधक के चले जाने के पश्चात् कोई दिगम्बर तेरापंथी साधक मंदिर में पूजा करने पहुँचे। मूर्ति के चरणों में फूलों को देखा तो बड़े लाल-पीले हुए कि किसी ने उनके भगवान् को तेरापंथी से बीसपंथी बना दिया (तेरापंथी मूर्तिपूजक प्रभु-मूर्ति पर फूल नहीं चढ़ाते)। गुस्से से भरे हुए वे मुनीम के पास आए और बोले- ''मुनीम जी! ये मंदिर में क्या घोटाला हो रहा

है। हमारे तेरापंथी भगवान् को बीसपंथी किसने बना दिया?" मुनीम को साथ लेकर मन्दिर में गए और उन्हें प्रभु चरणों में रखे फूलों को दिखाया। कहा- "देखो ये फूल! कहाँ से आए यहाँ? किसने डाला इन्हें प्रभु चरणों में? किसने हमारे भगवान् को बीसपंथी बनाया?"

बेचारे मुनीमजी क्या कहते? बोले- "माफ कीजिए, गलती हो गई।" इतना कहकर प्रभु चरणों में पड़े उन फूलों को समेटा एवं उठा कर चल दिए। जाते हुए कह गए- ये रहे आपके तेरापंथी भगवान्। तेरापंथी साधक का मन अब कुछ ठीक हुआ। गुस्सा उनका दूर हुआ। उन्हें लगा कि अब मेरे समक्ष जो भगवान् हैं, वे तेरापंथी भगवान हैं। अब मैं इनकी पूजा-अर्चना कर सकता हूँ।

बंधुओं! घटना के हृदय में जो छुपी हुई शिक्षा है, वह है- 'कषाय विजय' की शिक्षा। संत का काम पूजा, उपासना आदि नहीं है। वह तो गौणकर्म है। साधक का मुख्य कर्म है- कषायों को शांत, उपशांत करना, उन्हें क्षय, उपशम करने की साधना करना। अन्यथा तो यह कहा जा सकता है कि साँप तो बांबी में विद्यमान है और मूर्खतावश बांबी के मुख को ही पीटा जा रहा है। क्रोधादि कषायें सर्प हैं, विष हैं। मारना है तो उन्हें मारो। आज के साधक, वे चाहे श्रावक हों या संत, यदि क्रियाकाण्डों में उलझे हैं और अपने-अपने मत पर हठाग्रही बनकर झगड़ रहे हैं तो उनकी सारी साधना व्यर्थ है, निष्फल रह जाने वाली है। धर्म न मुँहपत्ति में है न मूर्ति में, धर्म तो अपने भीतर में है- आत्मा में है। जाग्रत् बनाना है इस आत्मा को। जाग्रत् आत्मा ही कषायों पर विजय प्राप्त करने की साधना में सफल हो सकता है। वेष तो पहचान मात्र है। 'पन्द्रह भेदे सिद्ध हुए' इस कथन में गृहस्थ लिंग सिद्धा, स्वलिंग सिद्धा, अन्य लिंग सिद्धा आदि का भी उल्लेख हुआ है। वेष बाधक नहीं है और न वेष साधक है। बाधक है कषाय और साधक है कषाय-विजय का भाव।

बंधुओं! अपनी दृष्टि को बदलिए, उसे सम्यक् बनाइए। सम्यग्दृष्टियुक्त बनकर ज्ञान, दर्शन की आराधना व चारित्र का पालन करने से ही कषाय शांत होंगे। ऐसी उत्कृष्ट साधना ही चतुर्विध साधकों को वीतरागता की ओर ले जाएगी। ■

शोधालेख

# क्या एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित करता है?

*श्री कन्हैयालाल लोढ़ा*

विगत कुछ शताब्दियों से बुद्धि के अतिरेक से अनेक भ्रान्त-धारणाओं का जन्म एवं उनका प्रचार-प्रसार तेजी से हुआ है। उनमें से एक धारणा यह भी है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ भी बना-बिगाड़ नहीं सकता है अथवा एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है। उनकी इस मान्यता के पीछे यह युक्ति है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ बनाने-बिगाड़ने लगे तो द्रव्य की स्वतंत्रता समाप्त हो जायेगी तथा एक द्रव्य दूसरे द्रव्य में परिणत हो जायेगा। फिर दो द्रव्यों का सम्मिश्रण हो जायेगा, जिससे द्रव्य के अस्तित्व का ही अंत होने का प्रश्न आ जायेगा, जो सिद्धान्त विरुद्ध है।

उपुर्यक्त विषय पर विचार करने के लिए 'द्रव्य के स्वरूप और व्यवस्था' पर विचार करना आवश्यक है। द्रव्य वह है जिसमें गुण व पर्याय हो। द्रव्य छः हैं :- (1) धर्मास्तिकाय,(2) अधर्मास्तिकाय,(3) आकाशास्तिकाय, (4) काल, (5) जीवास्तिकाय और (6) पुद्गलास्तिकाय। इन छः द्रव्यों में से जीव द्रव्य कर्ता है, शेष द्रव्य अकर्त्ता हैं। परन्तु जीव कोई भी कार्य करे या कोई भी घटना घटे, उसमें शेष द्रव्यों का योगदान आवश्यक है। कोई भी कार्य व घटना में धर्म, अधर्म, आकाश, काल और पुद्गल इन पाँचों का योगदान अनिवार्य होता है। कारण कि क्रिया से ही कार्य की सिद्धि होती है और प्रत्येक क्रिया में गति धर्मास्तिकाय से, गति का नियंत्रण अधर्मास्तिकाय से, अवस्थिति आकाशास्तिकाय से, परिणमन काल से एवं निर्माण पुद्गल से होता है। कोई क्रिया या कार्य ऐसा नहीं है, जिनमें इन पाँचों द्रव्यों का योगदान न होता हो। क्रिया के साथ कर्त्ता रूप में जीव द्रव्य भी जुड़ जाता है। अतः किसी भी क्रिया या कार्य की नियति या घटना में सभी द्रव्यों से अपना-अपना योगदान, सहयोग मिलता है। यह सहयोग दो प्रकार से मिलता है- उदासीन रूप से अथवा प्रेरकरूप से। धर्म-अधर्म, आकाश और काल इन द्रव्यों का योगदान उदासीन रूप में मिलता है। अर्थात् ये द्रव्य किसी अन्य द्रव्य को क्रिया करने के लिए प्रेरित नहीं करते हैं। परन्तु इन द्रव्यों में से किसी एक भी द्रव्य का

सहयोग न मिले तो कोई भी क्रिया, कार्य या घटना संभव नहीं। तात्पर्य यह है कि धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल और जीव इन छहों द्रव्यों की अपनी-अपनी विशेषता व उपयोगिता है। अपना-अपना कार्य है। यदि धर्म द्रव्य का अभाव हो तो जीव और पुद्गल गति नहीं कर सकते, यही कारण है कि जीव ऊर्ध्वगति स्वभाव वाला होकर भी लोक के बाहर गति नहीं कर सकता। कर्ममुक्त भाव अपने शुद्ध रूप में होता है और ऊर्ध्व गति करता है, परन्तु धर्मास्तिकाय के अभाव में उसकी यह गति लोक के अग्रभाग पर अवरुद्ध हो जाती है और अलोक में गति नहीं होती है। उसकी गति धर्मास्तिकाय द्रव्य के आश्रित है। किसी के आश्रित होना, उसके आश्रय के बिना कार्य न होना, कार्य रुक जाना, उससे प्रभावित होना है। इसी प्रकार जीव और पुद्गल का परिणमन काल द्रव्य के आश्रित है। काल के अभाव में परिणमन संभव नहीं है। यदि धर्म द्रव्य के अभाव में गति होना माना जाय अथवा काल द्रव्य के अभाव में परिणमन, परिवर्तन होना माना जाय तो धर्म और काल द्रव्य का गुण ही समाप्त हो जायेगा। गुण समाप्त होने से द्रव्य का ही अभाव हो जायेगा। तात्पर्य यह है कि धर्म द्रव्य के प्रभाव के अभाव में जीव और पुद्गल द्रव्य में गति संभव नहीं है और काल द्रव्य के प्रभाव के अभाव में परिणमन संभव नहीं है।

यह अवश्य है कि द्रव्य व द्रव्य के गुण शाश्वत होते हैं। जो शाश्वत होता है, उसकी उत्पत्ति व विनाश नहीं हो सकता है। अतः वह स्वाभाविक एवं नैसर्गिक होता है। इस दृष्टि से द्रव्य और उसके गुण स्वाभाविक एवं नैसर्गिक हैं, वे किसी व्यक्ति या शक्ति विशेष की देन नहीं हैं, अर्थात् द्रव्य व गुण की उत्पत्ति किसी व्यक्ति की देन नहीं होने से उन्हें अप्रभावित होना कहा जा सकता है। इस दृष्टि से एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है, यह कहना उचित हो सकता है। परन्तु यहाँ पर यह विचारणीय है कि भले ही द्रव्य व गुण की उत्पत्ति किसी अन्य द्रव्य पर निर्भर नहीं करती हो, परन्तु गुण की अभिव्यक्ति की तरतमता, अन्य द्रव्यों पर निर्भर करती है। जैसे 'धर्म' द्रव्य में चलने में सहायता देने का गुण है। धर्मास्तिकाय द्रव्य की सहायता के बिना कोई भी द्रव्य गति व हलन-चलन नहीं कर सकता। 'परन्तु जीव और पुद्गल द्रव्य न हो तो धर्मास्तिकाय द्रव्य के इस 'चलन' गुण की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती है। उदाहरणार्थ जल में तिराने का गुण है, परन्तु तैरने वाली वस्तु न हो तो उसकी तिराने की शक्ति या गुण की अभिव्यक्ति नहीं हो

सकती।

जीव में ज्ञान-दर्शन गुण स्वाभाविक हैं, परन्तु ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीय कर्म की तरतमता के कारण इन गुणों की अभिव्यक्ति में तरतमता देखी जाती है। इन दोनों कर्मों के क्षय से जीव द्रव्य के इन दोनों गुणों की पूर्ण अभिव्यक्ति संभव है। अतः जीव द्रव्य के ज्ञान-दर्शन गुण की अभिव्यक्ति कर्म से प्रभावित होती है। जीव द्रव्य कर्म रूप नहीं है, कर्म परभाव है, पर-द्रव्य है। अतः कर्मरूप पर-द्रव्य के संयोग के प्रभाव से जीव द्रव्य के गुणों की अभिव्यक्ति प्रभावित होती स्पष्ट देखी जाती है। यही नहीं, भगवती सूत्र में जीव का पाप कर्मों से भारी होना एवं पाप कर्मों के विरमण से जीव का हल्का होना कहा गया है। अर्थात् जीव द्रव्य का भारी व हल्का होना कर्म रूप पर-द्रव्य के संयोग-वियोग पर, पर-भाव पर निर्भर करता है। यह तो हुआ कर्म रूप पुद्गल द्रव्य का जीव द्रव्य पर प्रभाव। इसी प्रकार जीव योग प्रवृत्ति एवं कषाय भाव करता है तो इनके प्रभाव से शुभाशुभ कर्मों का बंध करता है अर्थात् जीव द्रव्य से कर्म रूप पुद्गल द्रव्य प्रभावित होता है, बंध को प्राप्त होता है। इतना ही नहीं, छद्मस्थ अवस्था में जीव द्रव्य के ज्ञान-दर्शन गुणों की अभिव्यक्ति इन्द्रिय तथा शरीर द्वारा ही होती है। एकेन्द्रिय जीव में स्पर्शनेन्द्रिय के अतिरिक्त अन्य इन्द्रियाँ कान, नयन, नाक, रसना नहीं होती है। इनके नहीं होने से एकेन्द्रिय जीव में चक्षुदर्शन, श्रोत्रमतिज्ञान, चक्षुमतिज्ञान, घ्राण मतिज्ञान, रसनामतिज्ञान, मनमतिज्ञान गुण की अभिव्यक्ति नहीं होती है। तात्पर्य यह निकला कि एकेन्द्रिय जीव के ज्ञान और दर्शन गुण की अभिव्यक्ति नहीं हो सकने का कारण इन्द्रिय, मन आदि पुद्गल द्रव्य का अभाव ही है। आशय यह है कि जीव द्रव्य के मति-श्रुतज्ञान एवं चक्षु-अचक्षु दर्शन गुण का प्रकटीकरण इन्द्रिय, शरीर आदि पुद्गल द्रव्य पर ही निर्भर करता है अर्थात् जीव का ज्ञान-दर्शन गुण भी पुद्गल से प्रभावित होता है।

यदि जीव द्रव्य का पुद्गल द्रव्य से प्रभावित होना नहीं माना जाय तो फिर पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध व मोक्ष तत्त्व का ही अभाव हो जायेगा। कारण कि बंध पर-द्रव्य का ही होता है अर्थात् बन्ध तत्त्व में पर-द्रव्य प्रभावित होकर जीव के साथ बंधता है। तब ही बंध के कारणों को आस्रव, बंध के रोकने को संवर, बंध के काटने को निर्जरा, पूर्ण रूप से बंध रहित होने को मोक्ष तत्त्व कहा है।

जहाँ पर-द्रव्य से अर्थात् पुद्गल से जीव का बंध ही नहीं हो तो फिर वह मुक्त किससे हो? अर्थात् किसी से नहीं। अतः मुक्ति का अभाव होने से मुक्तित्व व उसके साधन ज्ञान, दर्शन, चारित्र एवं तप का ही अभाव हो जायेगा। इस प्रकार बंध के अभाव में आस्रव, संवर आदि अन्य तत्त्वों का भी अभाव हो जायेगा या फिर साधक, साधना व सिद्धि का भी अभाव हो जायेगा।

जीव और पुद्गल द्रव्य के अभाव में काल द्रव्य के वर्तनागुण 'नये को पुराना करने व विनाश करने रूप गुण' की अभिव्यक्ति ही संभव नहीं है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय द्रव्य के स्थिर गुण की अभिव्यक्ति भी जीव और पुद्गल द्रव्य पर निर्भर करती है। अर्थात् इन द्रव्यों के गुणों की अभिव्यक्ति पर-द्रव्य पर निर्भर करती है। यद्यपि धर्म,अधर्म, आकाश और काल ये चारों द्रव्य अश्लिष्ट हैं, स्वतंत्र हैं, तथापि इन्हें अपना अस्तित्व व गुण-धर्म बताने के लिए दूसरे द्रव्य का आश्रय लेना होता है। जिस प्रकार एक ही आकाश या जगह में हजारों रेडियों की लहरें स्वतंत्र रूप से विद्यमान हैं, परन्तु रेडियो यंत्र के बिना उनका प्रगटीकरण नहीं होता है। इसी प्रकार ये द्रव्य एक ही स्थान पर अपने स्वतंत्र अस्तित्व रूप में विद्यमान हैं, परन्तु निमित्त के मिलने पर ही इनके गुण प्रगट होते हैं। इनमें से केवल जीव द्रव्य ही ऐसा है जिसके केवल ज्ञान और केवलदर्शन गुण ज्ञानावरणीय कर्म के निमित्त के मिटने से प्रगट होते हैं। ज्ञानावरणीय कर्म के निमित्त से ये गुण प्रकट नहीं होकर आवरित होते हैं। इस प्रकार ये गुण भी निमित्त से प्रभावित होते ही हैं।

तात्पर्य यह है कि समस्त लोक की गतिविधि छहों द्रव्यों के पारस्परिक संबंध व प्रभाव से हो रही है। लोक के स्वरूप में सभी द्रव्यों का अपना-अपना योगदान है। केवल जीव द्रव्य ही एक ऐसा द्रव्य है जो कर्म-मुक्त हो जाने पर अपना कोई योगदान नहीं करता है और स्वयं भी प्रभावित नहीं होता है, परन्तु जीव जब तक कर्मयुक्त है तब तक कर्म के प्रभाव से नरक, तिर्यंच, पशु-पक्षी आदि योनियों में भ्रमण करता है। साता-असाता रूप वेदना व सुख-दुःख का अनुभव करता ही है। कर्म-सिद्धान्त एवं गुणस्थान सिद्धान्त का वर्णन जीव द्रव्य के गुण की अभिव्यक्ति की पर्यायों का ही वर्णन है। कर्मोदय व कर्मबंध के रूप में पुद्गल द्रव्य का प्रभाव जीव द्रव्य पर हर समय, हर घटना, हर प्रवृत्ति में प्रकट होता है। इसे स्वीकार न करना जीवन को ही स्वीकार न करना है।

कार्य की सिद्धि उपादान और निमित्त इन दोनों प्रकार के कारणों से होती है। ये दोनों कारण दो-दो प्रकार के कहे जा सकते हैं:-(1) सबल और (2) निर्बल। इन्हीं की सबलता-निर्बलता की तरतमता पर कार्य की न्यूनाधिकता की सिद्धि सम्भव है। उदाहरणार्थ नमिराजर्षि को लें। उनका उपादान सबल था तो चूडियों की आवाज जैसे साधारण व निर्बल निमित्त कारण से उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया और उन्होंने घर-बार छोड़कर संयम धारण कर लिया, जबकि हम व अन्य लोगों में अपने सगे-संबंधी व मित्रों को श्मशान में जलते देखकर भी संयम लेने की भावना नहीं जागती, केवल श्मशानिया वैराग्य उत्पन्न होता है जो वहीं श्मशान में ही समाप्त हो जाता है। यह उपादान की निर्बलता का द्योतक है। प्रसन्नचन्द्रराजर्षि ध्यानस्थ खड़े थे, मार्ग में चलते यात्रियों की वार्ता के साधारण से निमित्त के प्रभाव से उनमें कषाय की ज्वाला धधक उठी और सातवीं नरक तक जाने के योग्य स्थिति बन गई। यह उपादान की निर्बलता का उदाहरण है। फिर पुरुषार्थ से जब उपादान सबल हुआ तो कुछ ही क्षणों में केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। इसी प्रकार आँखों की भयंकर वेदना के प्रबल निमित्त के प्रभाव से अनाथी मुनि को वैराग्य उत्पन्न हो गया और वे साधु बन गये। जब तक उन्हें वेदना के निर्बल निमित्त मिलते रहे तब तक उनका उपादान न जगा, वैराग्य न हुआ। गजसुकुमारमुनि ने प्रबल उपादान और सिर पर अंगारे के प्रबल निमित्त से एक ही रात्रि में मुक्ति प्राप्त कर ली, जब कि खंदक मुनि उपादान की निर्बलता से मुक्ति न पा सके और उनके शिष्यों ने मुक्ति पा ली। आशय यह है कि कार्य की सिद्धि अकेले उपादान या अकेले निमित्त पर तथा निर्बल उपादान व निर्बल निमित्त पर निर्भर नहीं करती। उपादान सबल होने पर निर्बल निमित्त भी कार्य कर जाता है और उपादान निर्बल होने पर प्रबल निमित्त से जगा पुरुषार्थ कार्य कर देता है, परन्तु कार्य सिद्धि में उपादान के साथ निमित्त का योगदान रहता ही है। बहुत बार ये निमित्त स्वतः मिल जाते हैं और बहुत बार निमित्तों को मिलाना होता है। स्वाध्याय, सद्ग्रंथ पठन, सद्गुरुदर्शन, सत्संग आदि निमित्तों को मिलाना होता है। इन निमित्तों से साधना बढ़ती है।

अतः निमित्त कारणों को समान प्रभावी मानना तथा एकान्त अकिंचित्कर मानना भूल है। इसे समझने के लिए दूसरा उदाहरण हम वृक्ष का ही लें। वृक्ष की उत्पत्ति बीज से हुई है, अतः बीज उसका उपादान कारण है और खाद, जल, वायु, प्रकाश आदि निमित्त कारण हैं। इन निमित्त कारणों में वृक्ष प्रभावित होता प्रत्यक्ष में

देखा जाता है। कुछ समय तक जल न मिलने पर वृक्ष या पौधा मुरझाकर सूख जाता है तथा जल व खाद उचित मात्रा में मिलने पर वृक्ष लहलहाने लगता है। इस प्रकार निमित्त कारणों का प्रभाव स्पष्ट देखा जाता है। अतः निमित्त कारण को केवल अकिंचित्कर मानना, प्रभावकारी न मानना भूल है, असम्यक् ज्ञान है। हाँ, यह सही है कि बीज को व बीज के गुण को नहीं बदला जा सकता।

यह सच है कि नीम के बीज को आम के बीज में नहीं बदला जा सकता और न नीम के कटु रस को आम के मधुर रस में बदला जा सकता है, केवल इनका परिणमन ही निमित्त से प्रभावित होता है। अर्थात् द्रव्य एवं गुण की नवीन उत्पत्ति निमित्त से संभव नहीं है, किन्तु द्रव्य और गुण के परिणमन अर्थात् पर्याय पर निमित्त का प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार एक द्रव्य के द्रव्यत्व व गुण की आत्यन्तिक उत्पत्ति या विनाश करने में अन्य द्रव्य समर्थ नहीं है। इस दृष्टि से एक-द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है, यह कथन उचित है, परन्तु एक द्रव्य दूसरे द्रव्य की व उसके गुण की पर्यायों को प्रभावित नहीं कर सकता, यह कथन भूल है।

उपर्युक्त विवेचन से फलितार्थ यह निकलता है कि किसी भी द्रव्य और उस द्रव्य के गुणों की उत्पत्ति या संपत्ति उसकी निजी, स्वाभाविक, नैसर्गिक होती है, वह किसी अन्य द्रव्य की देन नहीं होती है। इस दृष्टि से एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है। परन्तु उस द्रव्य व उसके गुणों की अभिव्यक्ति में द्रव्य परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

नयों के रूप में कहें तो निश्चय-नय द्रव्य का और व्यवहार-नय पर्याय का आश्रय लेकर वर्णन करता है। अतः निश्चय-नय की दृष्टि से एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है, यह कहा जा सकता है और व्यवहार-नय की दृष्टि से एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित करता है, यह कहा जाता है। दोनों नयों को स्वीकार करना ही अनेकान्त दृष्टि है। एक नय को स्वीकार करना और अन्य नय का लोप करना एकान्त दृष्टि है। एकान्त दृष्टि मिथ्या दृष्टि है। वीतराग के मार्ग में एकान्त दृष्टि का कोई स्थान नहीं है। वीतराग मार्ग की विशेषता व महत्ता उसकी अनेकान्त दृष्टि में ही है।

इसी प्रकार व्यवहार नय को सर्वथा अभूतार्थ कहना भी एकान्त दृष्टि है। कारण कि संसार का सारा कार्य, पूरे लोक का संचरण, पर्याय व व्यवहार से ही होता

है । यह व्यवहार प्राणी में प्रवृत्ति रूप होता है । जब तक शरीर है तब तक मन, वचन, काया की कोई न कोई प्रवृत्ति हर समय अनवरत होती रहती है । अतः व्यवहार नय का विरोध करना जीवन का विरोध करना है । परन्तु प्रवृत्ति के दो रूप हैं-(1) अशुभ और (2) शुभ प्रवृत्ति । अशुभ प्रवृत्ति(दुष्प्रवृत्ति) पाप रूप होती है जो त्याज्य ही है । शुभ प्रवत्ति (सद्प्रवृत्ति) का भावात्मक रूप त्याग तथा क्रियात्मक रूप सर्व हितकारी होता है । त्याग मुक्ति का साक्षात् कारण और सर्वहितकारी प्रवृत्ति मुक्ति का सहयोगी कारण होती है । महत्त्व दोनों का है, अंतर इतना ही है कि त्याग स्वाश्रित होने से मुक्ति में परिणत हो जाता है, परन्तु सर्वहितकारी प्रवृत्ति पराश्रित होने से छूट जाती है अर्थात् त्याग जीवन है और सद्प्रवृत्ति जीवन का सहयोगी अंग है । सहयोगी अंग को जीवन न मानना तो उचित है, परन्तु उसका सर्वथा निषेध करना भारी भूल है । कारण कि प्रवृत्ति रहित देहातीत का जीवन संभव ही नहीं है । अतः जो सद्प्रवृत्ति नहीं करेगा वह दृष्प्रवृत्ति करेगा, जो मुक्ति में घोर बाधक है । इस दृष्टि से दुष्प्रवृत्ति रूप व्यवहार अभूतार्थ है, परन्तु सद्प्रवृत्ति रूप व्यवहार अभूतार्थ नहीं है । इस अनेकान्त दृष्टि को अपनाने से ही साधना सफल होती है । कारण कि शुभ प्रवृत्ति को संवर कहा है । संवर का अपलाप करना साधना का अपलाप करना है । साधना का अपलाप करना मुक्ति का अपलाप करना है ।

कर्म सिद्धान्त में तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती वीतराग के भी साता वेदनीय और असाता वेदनीय का उदय माना गया है । साता वेदनीय का उदय अनुकूल शारीरिक पुद्गलों से एवं असाता वेदनीय का उदय प्रतिकूल शारीरिक पुद्गलों से होता है । साता वेदनीय और असाता वेदनीय का उदय जीव विपाकीय होने से जीव को प्रभावित करता है । अर्थात् साता-असाता का वेदन कराने वाला पुद्गल ही है । पुद्गल के अभाव में साता और असाता का वेदन नहीं हो सकता । इससे सिद्ध होता है कि अजीव पुद्गल चौदहवें गुणस्थान तक जीव को प्रभावित करता है । अर्थात् संसारस्थ जीव मात्र पुद्गल से प्रभावित होते हैं । जैसे लोहे के संग से आग को हथौड़े से पीटने पर लंबा-चौड़ा होना, संकोच विस्तार रूप क्रिया देखी जाती है उसी प्रकार जड़ कर्म के संग से जीव को जन्म-मरण, भोग-भ्रमण, साता-असाता का वेदन करना ही पड़ता है । हाँ, यह क्षमता या सामर्थ्य जीव में अवश्य है कि वह इनके कर्म या पुद्गल अजीव के संग या सम्बन्ध का त्याग कर इनके प्रभाव से अपने को बचा सकता है । यही साधना का मूल मंत्र भी है कि साधक

सर्वसंग्रहरहित होकर विचरें ताकि घाती कर्मों से प्रभावित्त न हों। अघाती कर्मों के प्रभाव से छूटने में जीव समर्थ नहीं है। यदि समर्थ होता तो वीतराग असाता के वेदन से अपने को बचा लेते।

इसी प्रकार जीव भी पुद्‌गल को प्रभावित करता है। जीव के पुरुषार्थ से ही रेड़ियो, टेलीविजन, टेलीफोन, कार आदि पौद्‌गलिक वस्तुओं का निर्माण होता है। जीव के अभाव में इनका निर्माण संभव नहीं है और न जीव की उपस्थिति मात्र से इनका निर्माण होता है। यदि जीव की उपस्थिति मात्र से इनका निर्माण स्वतः संभव होता तो आज से एक हजार वर्ष पहले भी इनका निर्माण हो जाना चाहिये था। परन्तु तब जीव को इनके निर्माण की कला नहीं आती थी। अतः इनका निर्माण नहीं हुआ। आज भी जीव की बौद्धिक शक्ति, श्रम व प्रयोग के बिना इनका निर्माण संभव नहीं है। पुद्‌गलों का पिण्ड लोहा अपने आप पुर्जों का रूप ग्रहण नहीं कर लेता है। मनुष्य के बौद्धिक व शारीरिक पुरुषार्थ से ही लोह पिण्ड विभिन्न आकार-प्रकार के पुर्जों का रूप लेता है। बौद्धिक शक्ति अर्थात् ज्ञान गुण जीव का ही लक्षण है। इससे स्पष्ट होता है कि टेलीविजन आदि का कर्त्ता जीव ही है, अजीव नहीं।

जीव अजीव इन दोनों में परस्पर प्रभावित करने में इतना अंतर अवश्य है कि जीव में यह क्षमता है कि वह चाहे तो अजीव के प्रभाव से अपने को कुछ सीमा तक बचा सकता है। अर्थात् उससे न्यूनाधिक प्रभावित हो सकता है तथा सदा के लिये मुक्त भी हो सकता है। परन्तु अजीव में यह क्षमता या सामर्थ्य नहीं है। उसे तो प्रभावित होना ही पड़ता है। उदाहरणार्थ- अजीव पुद्‌गलमय रूई को लें, यदि व्यक्ति(जीव) उसमें आग लगायेगा तो वह आग के प्रभाव से जलकर राख हो जायेगी। उस रूई को पींजना, सूत बनाना आदि कार्य करने पर तो वह रूई अपने को इनसे बचाने में समर्थ या सक्षम नहीं हो सकती। उसे इन रूपों में बदलना ही होगा। ये बदलाव उसमें स्वतः नहीं होता है, जीव के कारण से ही होता है। इसी यथार्थता व सच्चाई के आधार पर ही स्टील के, वस्त्र बनाने के, घड़ी, रेड़ियो, टेलीविजन आदि बनाने के कारखाने चल रहे हैं। यदि जीव के समान ये भी न्यूनाधिक प्रभावित होते या प्रभावित न होते तो कारखाने चल ही नहीं सकते हैं। तात्पर्य यह है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता है यह मानना न न्याय संगत है, न युक्तियुक्त और न ही व्यवहार सिद्ध।

*-82/141, मानसरोवर, जयपुर (राज.)*

तत्त्वज्ञान

# उपांगों में पुण्य तत्त्व (4)■

## (प्रज्ञापना सूत्र में पुण्य)

*सुश्री नेहा चोरडिया, जलगाँव*

चौथे अंग समवायांग सूत्र का उपांग है प्रज्ञापना।
जिसमें जीव-अजीव तत्त्वों की,
विशिष्ट प्रकार से है निरूपणा।
कुल 36 पदों में जैन सिद्धान्तों की है विवेचना।
जिसके गहन तलस्पर्शी रहस्यों में है,
पुण्य की उपादेयता की प्ररूपणा।
गुरु की अनिर्वचनीय कृपा से,
करते हैं उन सूत्रों की गवेषणा।
जिसका प्रथम सूत्र है:-

**ववगयजरामरणभए सिद्धे अभिवंदिऊण तिविहेण।**
**वंदामि जिणवरिंदं तेलोक्कगुरुं महावीरं ।।1।।**

**अर्थः**- जरा, मृत्यु और भय से रहित सिद्धों को त्रिविध (मन, वचन और काया से) अभिवंदन करके त्रैलोक्यगुरु जिनवरेन्द्र श्री भगवान् महावीर को वंदन करता हूँ।

यहाँ 'वंदामि' शब्द क्या संसूचित करता है? क्या लाभ है वंदना का? उत्तराध्ययन सूत्र 29/10 में कहा है- **वंदणएणं भंते! जीवे किं जणयइ? वंदणएणं नीयागोयं कम्मं खवेइ, उच्चागोयं कम्मं निबंधइ।** उच्चगोत्र का रहस्य है अहंकृति का भंजन-गुणों पर दृष्टि, जिसमें अंदर शुभ अध्यवसाय अर्थात् भाव विशुद्धि और बाहर में मन, वचन और काया पुण्य। जिससे सीमित प्रवृत्ति से आने वाले कर्मों का अशुभ अनुभाग मंद, मंदतर होता है और शुभ अनुभाग में वृद्धि होती है, यही भीतरी पुण्य तत्त्व है। अब आगे खोजें पुण्य की चर्चा को- तिर्यंच पंचेन्द्रियों के भेदों में :-

**से किं तं आसालिया? कहि णं भंते! आसालिया संमुच्छइ? गोयमा! अंतो मणुस्स खेत्ते अड्ढाइज्जेसु दीवेसु, णिव्वाघाएणं पण्णरससु कम्मभूमीसु, वाघायं पडुच्च पंचसु महाविदेहेसु, चक्कवट्टि - खंधावारेसु, वासुदेव-खंधावारेसु,**

■ यह लेख मई 2008 की जिनवाणी में प्रकाशित लेख के क्रम में द्रष्टव्य है।-सम्पादक

बलदेव-खंधावारेसु, मंडलिय-खंधावारेसु, महामंडलिय-खंधावारेसु, गामणिवेसेसु णगरणिवेसेसु, णिगमणिवेसेसु, खेडणिवेसेसु, कब्बडणिवेसेसु, मंडबणिवेसेसु, दोणमुहणिवेसेसु, पट्टणणिवेसेसु, आगरणिवेसेसु, आसमणिवेसेसु, संबाहणिवेसेसु रायहाणीणिवेसेसु, एएसिणं चेव विणासेसु एत्थ णं आसालिया संमुच्छइ। जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागमित्ताए ओगाहणाए उक्कोसेणं बारसजोयणाइं, तयणुरूवं च, णं विक्खंभबाहल्लेणं भूमिं, दालित्ता णं समुट्ठेइ असण्णी मिच्छदिट्ठी अण्णाणी अंतोमुहुत्तऽद्धाउया चेव कालं करेइ। से तं आसालिया।

आसालिक किस प्रकार के होते हैं? भगवन् आसालिक कहाँ उत्पन्न होते हैं? गौतम! वे मनुष्य क्षेत्र के अंदर ढाई द्वीपों में, निर्व्याघातरूप से पन्द्रह कर्म भूमियों में व्याघात की अपेक्षा से पाँच महाविदेह क्षेत्रों में अथवा चक्रवर्ती के स्कंधावारों में या वासुदेवों के स्कंधावारों में, बलदेवों के स्कंधावारों में, माण्डलिकों के स्कंधावारों में, महामाण्डलिकों के स्कंधावारों में, ग्रामनिवेशों में, नगरनिवेशों में, निगमनिवेशों में, खेटनिवेशों में, कर्बटनिवेशों में, मडंबनिवेशों में, द्रोणमुखनिवेशों में, पट्टणनिवेशों में, आकरनिवेशों में, आश्रमनिवेशों में, संबाधनिवेशों में और राजधानी निवेशों में। इन चक्रवर्ती स्कंधावार आदि स्थानों का विनाश होने वाला हो तब इन (पूर्वोक्त) स्थानों में आसालिक-सम्मूर्च्छिमरूप से उत्पन्न होते हैं। वे (आसालिक) जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग-मात्र की अवगाहना से और उत्कृष्ट बारह योजन की अवगाहना से उत्पन्न होते हैं। इस (अवगाहना) के अनुरूप ही उनका विष्कम्भ (विस्तार) और बाहल्य (मोटाई) होता है। वह (आसालिक) चक्रवर्ती के स्कंधावार आदि के नीचे की भूमि को फाड (विदारण) कर प्रादुर्भूत (समुत्थित) होता है। वह असंज्ञी, मिथ्यादृष्टि, और अज्ञानी होता है, तथा अन्तर्मुहूर्त काल की आयु भोग कर मर (काल कर) जाता है। यह हुई उक्त आसालिक की प्ररूपणा।

चक्रवर्ती, वासुदेव, नरदेव, अर्धनरदेव ये सभी अत्यन्त पुण्यशाली होते हैं, पर जब पुण्य समाप्त हो जाता है तब उनके स्कन्धावारों का/छावनियों का भी विनाश हो जाता है। भजन की पंक्तियों में भी कहा है-

पुण्य से माधव इण लोके ,साहिबी इन्द्र सरीखी भोगे
द्वारिका बाली जद जोगी, संपदा सपना जिम होगी
भोगवता दुःख मानसी, निकल्या बंधव दोय
पाण्डु मथुरा जाता बीच में, मरण प्राप्ति होय
गये बलभद्र लेन वारि।टरे नहीं कर्म रेख टारी....

और बृहदालोयणा में भी कहा है-

जब लग जिसके पुण्य का, पहुँचे नहीं करार।
तब लग उसको माफ है, अवगुण करे हजार।।

पुण्य खुटा और जीव लुटा। इस प्रकार संसार को अच्छा बनाने का श्रेय भी पुण्य को ही है। इसी पुण्य से ऋद्धि प्राप्त आर्य होते हैं, उसका वर्णन इस सूत्र में:-

से किं तं आरिया? आरिया दुविहा पण्णत्ता। तंजहा-इड्ढिपत्तारिया य अणिडिढ्पत्तारिया य। से किं तं इड्ढिपत्तारिया? इड्ढिपत्तारिया छव्विहा पण्णत्ता। तंजहा- (1)अरंहता, (2) चक्कवट्टी, (3) बलदेवा, (4) वासुदेवा, (5) चारणा, (6) विज्जाहरा। से त्तं इड्ढिपत्तारिया।

आर्य कौन से हैं? आर्य दो प्रकार के कहे गए हैं। वे इस प्रकार हैं- ऋद्धिप्राप्त आर्य और अऋद्धिप्राप्त आर्य।

ऋद्धिप्राप्त आर्य कौन से हैं?

ऋद्धिप्राप्त आर्य 6 प्रकार के हैं। वे इस प्रकार हैं- (1) अर्हन्त(तीर्थंकर), (2) चक्रवर्ती, (3) बलदेव, (4) वासुदेव, (5) चारण और (6) विद्याधर। यह हुई ऋद्धिप्राप्त आर्यों की प्ररूपणा।

यह ऋद्धि पूर्व आचरित तप-संयम के सहवर्ती पुण्य से अर्जित है। तीर्थंकर नाम स्पष्ट पुण्य प्रकृति है ही- वह भी साधना से ही निकाचित बंध को प्राप्त होती है। यद्यपि साधना के निदान से वासुदेव पद मिलता है, तथा चक्रवर्ती भी कोई-कोई ब्रह्मदत्त के समान निदानकृत हो सकता है-वह पुण्य है, पर पाप के अनुबंध से युक्त। क्योंकि साधना के साथ पुण्य बढ़ा, पर लौकिक कामना रूपी पाप से उस पुण्य को क्षीण कर लिया। इसे ठाणांग सूत्र में पापानुबंधी पुण्य 'असुभे-नाममेगे सुभे' से सूचित करते हैं। वहाँ शुभ अध्यवसाय विशुद्ध परिणामों की कमी रूप पाप से विकृति आई-पुण्य में कमी आई इसलिए पाप ही हेय है, पुण्य नहीं।

प्रज्ञापना का पाँचवाँ पद उद्घोष करता है-

औदारिक के दंडक हैं 10, सभी में जघन्य स्थिति में मात्र 2 अज्ञान हैं, ज्ञान नहीं। क्षुद्र भव-256 आवलिका का होता है। यह स्थिति पाप के तीव्र उदय व पुण्य की अत्यधिक न्यूनता का ही तो परिणाम है- पुण्यहीनता से समकित संभव नहीं है। अतः ज्ञान नहीं होता। पुण्यवर्धन हो, आयु सुदीर्घ हो तभी ज्ञान संभव है- यह भी दिखा रहा है पुण्य की उपादेयता।

और छठा पद क्या कह रहा है-

तहेव अणुत्तरोववाइया वि। णवरं इमं णाणत्तं-संजया चेव। जइ संजय सम्मदिट्ठिपज्जत्त-संखेज्जवासाउयकम्मभूमगब्भवक्कं तियमणुस्से हिंतो उववज्जंति किं पमत्तसंजयसमदिट्ठिपज्जत्तएहिंतो? अपमत्तसंजएहिंतो उववज्जंति ? गोयमा! अपमत्तसंजएहिंतो उववज्जंति, नो पमत्तसंजएहिंतो उववज्जंति।

उसी प्रकार अनुत्तरौपपातिक देवों की स्थिति समझनी चाहिए। विशेष यह है कि संयत ही अनुत्तरौपपातिक देवो में उत्पन्न होते हैं। यदि वे संयत सम्यग्दृष्टि पर्याप्तक संख्यात वर्षायुष्क कर्मभूमिज गर्भज मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे प्रमत्त से या अप्रमत से उत्पन्न होते हैं? गौतम! अप्रमत्त संयतों से वे उत्पन्न होते हैं, किंतु प्रमत्तसंयत से उत्पन्न नहीं होते हैं।

आयु कर्म का उत्कृष्ट अनुभाग और उत्कृष्ट स्थिति कब किसको कैसे प्राप्त होती है? जब जीव छठे से सातवें गुणस्थान के सन्मुख होता है और छठे में बंध प्रारम्भ कर सातवें गुणस्थान में अप्रमत्त संयत अवस्था में पूर्ण करता है तब। भगवती शतक 14 उद्देशक 7 में 'लव सत्तम' देव का कथन है जो मात्र 4 मिनिट 21-9/11 सेकिण्ड जितनी मनुष्य भव की आयु और होती तो सारे कर्म काट देते, इतनी उत्कृष्ट विशुद्धि में ही आयुकर्म का उत्कृष्ट पुण्य संचय हो सकता है। काल करते समय 7 वें से 11 वाँ गुणस्थान ही हो सकता है। शुक्ल पक्षी उस जीव को अभी संसार यात्रा के 33 सागर झाझेरी काल को पूरा करना बाकी रहा था, इसलिए विशुद्धि के प्रभाव से वह काल शुभ में व्यतीत करने का कारण बना है पुण्य।

आगे चलें नववाँ योनि पद-

कइविहा णं भंते! जोणी पण्णत्ता? गोयमा! तिविहा जोणी पण्णत्ता। तंजहा-कुम्मुण्णया, संखावत्ता, वंसीपत्ता। कुम्मुण्णया णं जोणी उत्तमपुरिसमाऊणं। कुम्मुण्णयाए णं जोणीए उत्तमपुरिसा गब्भे वक्कमंति तंजहा-अरहंता, चक्कवट्टी बलदेवा, वासुदेवा।

भगवन्! योनि कितने प्रकार की कही गई है? गौतम! योनि तीन प्रकार की कही गई है। वह इस प्रकार है- 1. कूर्मोन्नता, 2. शंखावर्ता और 3. वंशीपत्रा।

कूर्मोन्नता योनि उत्तमपुरुषों की माताओं की होती है। कूर्म्मोन्नता योनि में (ये) उत्तमपुरुष गर्भ में उत्पन्न होते हैं- जैसे- अर्हन्त (तीर्थंकर), चक्रवर्ती, बलदेव और वासुदेव।

पुण्यशाली जीवों को शास्त्र उत्तम पुरुष कहता है, उनकी माता भी विशिष्ट

पुण्यशाली होती है जिसकी जन्म से शारीरिक संरचना श्रेष्ठ योनिमय होती है। अतः आगमकार पुण्य को उत्तम संसूचित कर रहे हैं।

आगे बीसवें अंतक्रियापद में आता है- 'पुढवी-आउ-वणस्सइकाइया य अणंतरागया वि अंतकिरियं पकरेंति परंपरागया वि अंतकिरियं पकरेंति।'

कहा है- पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और वनस्पतिकायिक (एकेन्द्रिय जीव) अनन्तरागत भी अंतक्रिया करते हैं और परंपरागत भी अंतक्रिया करते हैं। केवली की आगत 108- उसमें 105 (81 देव, 15 मनुष्य, 5 सन्नी तिर्यंच, 4 नरक) मन वाले हैं - ये सम्यदृष्टि भी हो सकते हैं, पर ये तीनों असंज्ञी, एकेन्द्रिय, एकान्त मिथ्यादृष्टि ही होते हैं तब इनमें अंतक्रिया की योग्यता कैसे? अगले मनुष्य के भव में वज्रऋषभ नाराच संहनन (जिसका मुक्तिगामी चरमशरीरी जीव के साथ अविनाभावी संबंध है) कैसे प्राप्त करेगा? पुण्य से ही तो। उसकी एकेन्द्रिय पर्याप्त की सारी पूँजी पुण्य से ही अर्जित होगी, तभी तो चरमशरीरी बन सकता है अर्थात् विशिष्ट पुण्य को इकट्ठा करने का सामर्थ्य पृथ्वी, अप्, वनस्पति में भी है और उसी पुण्य की बदौलत उन जीवों का उत्थान संभव है।

तेउक्काइए णं भंते! तेउक्काइएहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जेज्जा? गोयमा! अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए णो उववज्जेज्जा। जे से णं केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए? गोयमा! अत्थेगइए लभेज्जा अत्थेगइए णो लभेज्जा। जे णं भंते! केवलीपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए से णं केवलं बोहिं बुज्झेज्जा? गोयमा! णो इणट्ठेसमट्ठे।

भगवन्! तेजस्कायिक जीव, तेजस्कायिकों में से निकल कर क्या सीधा पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होता है?

गौतम! कोई उत्पन्न होता है और कोई उत्पन्न नहीं होता है। भगवन्! जो उत्पन्न होता है वह केवलिप्रज्ञप्त धर्मश्रवण प्राप्त कर सकता है?

गौतम! कोई प्राप्त करता है, कोई नहीं। भगवन्! जो धर्मश्रवण प्राप्त करता है क्या वह केवलिप्रज्ञप्त बोधि को समझ पाता है?

गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

दशाश्रुतस्कंध की दसवीं दशा में भी बताया गया- जिसने भोग के निदान रूपी तीव्र पाप किया, वह केवली प्ररूपित धर्म को सुन भी नहीं सकता। पाप की कमी और पुण्य के प्रवर्धन से ही धर्म श्रवण हो सकता है। सन्दर्भ- दशवैकालिक- दूसरी चूलिका गाथा 1 - जं सुणित्ता सुपुण्णाणं धम्मे और उत्तराध्ययन

3.9,10.18 भी स्पष्ट करते हैं कि धर्म श्रवण पुण्यवानी से ही हो सकता है। तेउ-वायु के जीवों की इतनी पुण्यवानी नहीं कि मनुष्य गति में उत्पन्न हो, मनुष्य गति का बंध वे नहीं कर सकते। वे अगले तिर्यंच पंचेन्द्रिय के भव में केवलिप्रज्ञप्त धर्म को सुन तो सकते हैं, पर सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकते। समकित प्राप्ति के साधन पुण्य से ही जुट सकते हैं।

मोक्ष का प्रमाणपत्र है सम्यग्दर्शन और सम्यग्दर्शन रूपी प्रमाण पत्र जुटाने में भूमिका निभाता है आत्मविशुद्धि रूपी भाव पुण्य।

रायप्पसेणीय सूत्र में जहाँ जीव और शरीर की भिन्नता के बारे में शंका और समाधान का वर्णन किया है वहाँ प्रदेशी राजा ने शंका प्रस्तुत करते हुए उदाहरण दिया- एक तरुण-सबल, कार्यक्षम, स्वस्थ पुरुष भार उठा पाता है, वृद्ध, निर्बल, अक्षम, रुग्ण पुरुष भार नहीं उठा पाता, उसका आशय यह है कि यदि जीव और शरीर भिन्न-भिन्न होते तो कार्यक्षमता का संबंध जीव से होने के कारण तरुण और वृद्ध दोनों ही उस भार को उठा पाते, पर यह संभव नहीं, अतः वह शरीर ही है जीव नहीं है।

इस शंका का समाधान करते हुए केशीकुमार श्रमण ने कहा- "बाह्य-भौतिक कार्यों के होने न होने का संबंध उपकरणों से है। जीव शरीर में चेतनात्मक शक्ति का संवाहक है, किन्तु वैसा होते हुए भी भौतिक कार्यों की निष्पत्ति में शरीर की बाल्य, यौवन, वृद्धावस्था, स्वस्थता, अस्वस्थता आदि का प्रभाव पड़ता है। अतः जीव के स्वतंत्र अस्तित्व को बाह्य कार्यों की निष्पत्ति-अनिष्पत्ति के साथ नहीं जोड़ा जा सकता।"

यहाँ प्रश्न यह होता है कि संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त में उपकरण की पर्याप्तता किससे? कर्म प्रकृति के आधार से स्पष्ट ही है कि प्राण, भूत, जीव, सत्त्व पर अनुकंपा करने से सातावेदनीय का बंध होता है। दुःख नहीं देने से, शोक नहीं करने से, नहीं रुलाने से आदि शुभ परिणामों से पुण्य होता ही है। पुण्य- आत्मभाव की सम्मुखता से पुद्गल द्रव्य में, आत्मोत्थान की सहकारिता के भाव संचित होते हैं। मूल आत्मभाव ही है, विशुद्धि है, प्रशस्त अध्यवसाय है, जिससे गुणश्रेणि निर्जरा होती है। भीतर की विशुद्धि से मन, वचन, काया की प्रवृत्ति शुभ होती है। उसी से द्रव्य पुण्य (पुण्य कर्म) संचय होता है। (क्रमशः)

अंग्रेजी स्तम्भ

# Science of Dhovana-Water(5)

*Dr. Jeoraj Jain*

**Q 17(b) Boiling process is more cruel and violent to convert living water into non-living water rather than the process of making Dhovan. Boiling involves the use of fire, which results in gross killings of fire-bodied lives as well as that of air-bodied living-beings.**

**Then why should we resort to this practice at all?**

**What benefits are derived by drinking boiled or dhovan water?**

**A 17(b)** Answer to the first portion is same as answer **12(iii) b.**

In the light of above noted 17B, following benefits are bestowed due to drinking of non-living water.

**(i)** A laity knows that Boiled or Dhovan water is not easily available everywhere. Hence a **potential** is created purposely and intentionally by this vow to tolerate the difficulties with equanimity. As such this vow can be termed as **Tapa(Austerity).**

**(ii)** This vow leads to restriction on one's wish list and hence it is regarded as an act of sensual control. It enhances the fruits of **Vow.**

**(iii)** It restricts the no. of water-pots to be used by the vow-taker. He can even further take a supplementary vow to keep a limited no. or to denounce all other water-pots for his use. It brings the benefits of **limit-restriction.**

**(iv)** It leads to conquering of **Taste-sense,** because boiling or dhovan making changes the taste of water. Thus it helps conquering the attachment.

**Q 18. You consider Dhovan to be less violent, but bubbles have been seen sometimes coming out of dhovan. Hence it becomes more violent due to fermentation. Fermentation renders the water harmful to health also. Thus there is no "Sense" in resorting to the practice (*Rudhi*) of making Dhovan.**

**A 18.** Air bubbles may appear due to two reasons. If the **solubility** of air is reduced in water, during making of dhovan, excess air will come out as bubble. The second reason may be the evolution of carbon-dioxide gas due to **fermentation.**

If due to **negligence**, Dhovan ferments, it necessarily doesn't become poisonous or harmful to health. Breads, Jalebi etc. all are made by using fermentation process. They are eaten world-over. By ignorance, if we designate the fermented dhovan as poisonous or harmful to health, we may be **committing the sin** of evoking **hatred** towards Dhovan.

(1) Nonetheless, the process of dhovan making can be made more specific in modern times with better control parameters.

(2) If we use **ash** and other foreign-materials, the chances of fermentation would also be eliminated.

**Q 19. Why should I be held *responsible* for the himsa in the life-death cycles of water stored in my pitcher? It is the fate of water. Consider the jungle of *flora-fauna* in my body, particularly in my stomach. Due to my eating activity or habits, infinite no. of these bacteria and viruses, die every moment. Then with the above reasoning, shall I be held responsible for these gross killings in my stomach? Does Aagam assign the killings in the pot or Stomach to me?**

**A 19.** There are **three** aspects to it :

**(i)** The **flora-fauna** in our body depends on the self driven or auto activities of our body. We do not exercise any control

on it. Metabolism, breathing etc are also **automatic** activites. The "violence" in these automatic "life-sustaining" activities come under first category. The ***karmic bondage*** of this himsa is the **weakest.**

**(ii)** However, to store water in a pot in raw or in non-living condition, depends on our will. These activities are driven by our common sense and form a part of our routine house hold sustaining activities. This "himsa" is termed as **"Arambhja Himsa"**. Its **stickiness of Karmic bond** is of second grade.

**(iii)** Our common sense constantly reminds us to minimize or eliminate the wasteful **himsa.** This compulsion drives us to use boiled or dhovan water. Our humbleness and helplessness towards such living-beings **enhance** our inner **human values.** Otherwise one may tend to become reckless towards natural resources, and pause a serious threat to the ecological balance.

**Q 20. *A Glass of water* is taken directly from the tap for drinking or other purpose. At the most, care is taken to put a *filter* cloth or device on the tap to remove carefully the macro mobile living-beings from the tap water. We do *not require* water to be *stored* for us. Hence we do not bear any liability for the himsa.**

**A 20.** In the above situation of not having any water pot, the water comes either from an overhead tank or from some other reservoir. One is always aware and sure that water would be available in the house, whenever the need arises for it. It means the whole system of pipes etc. works as storage for the user. In resorting to storage, there is a known limit of water for one's use. One becomes **limit-setting shravak** by habit and design. When there is no alertness and unlimited water remains at one's

disposal, one is categorized as no limit-setting shravak, As per Agamas, limit-setting shravak (**Vrati**) carries for lesser liabilities for himsa. Moreover, one using direct tap water without resorting to a limited storage of it becomes liable for killing of **Unlimited water-beings** in the piping systems, for which one has **'attachment'** and ownership. This situation may also apply to all systems of public taps, if water from it, is not separately stored and consumed.

***-Kamani Centre, 2nd Floor, Bistapur, Jamshedpur-831001***

# SAND & STONE

Two Friends were walking through the desert. During some point of the journey they had an argument and one friend slapped the other one in the face.

The one who slapped was hurt, but without saying anything wrote in the sand: *TODAY MY BEST FRIEND SLAPPED ME IN THE FACE.*

The two kept walking, until they found an oasis where they decided to take a bath. The one who had been slapped became stuck in the mire and started drowning, but the friend saved him.

After he recovered from near drowning, he wrote on a stone: *TODAY MY BEST FRIEND SAVED MY LIFE.*

The friend who slapped and saved his best friend asked him, "After I hurt you, you wrote in the sand and now, you write on a stone, why?"

The other friend replied, "When someone hurts us, we should write it down in sand where winds of forgiveness can erase it away. But, when someone does something good for us. we must engrave it in stone where no wind can ever erase it."

***Collected By : Sanjay Srisrimal Jain (Hubli)***

Tattva bodha

# MANGALA SŪTRA

**Dr. Priyadarshana Jain**

| **TEXT** | **TRANSLATION** |
|---|---|
| ***Cattāri Maṅgalam*** | -Four are auspicious |
| ***Arihantā Mangalam*** | -Arihantas are auspicious |
| ***Siddhā Mangalam*** | -Siddhas are auspicious |
| ***Sāhu Mangalam*** | -Sadhus are auspicious |
| ***Kevali paṇṇatto*** | -Revealed by omniscients |
| ***Dhammo Mangalam*** | -That Dharma is auspicious |
| ***Cattāri loguttamā*** | -Four are supreme |
| ***Arihantā loguttamā*** | -Arihantas are supreme |
| ***Siddhā loguttamā*** | -Siddhas are supreme |
| ***Sāhu loguttamā*** | -Sadhus are supreme |
| ***Kevali-paṇṇatto*** | -Revealed by omniscients |
| ***Dhammo loguttamo*** | -That Dharma is supreme |
| ***Cattāri saraṇam pavajjāmi*** | -I seek refuge in the four |
| ***Arihante saraṇam pavajjāmi*** | -I seek refuge in the Arihantas |
| ***Siddhe saraṇam pavajjāmi*** | -I seek refuge in the Siddhas |
| ***Sahu saraṇam pavajjāmi*** | -I seek refuge in the Sādhus |
| ***Kevali-paṇṇattam*** | -Revealed by omniscients |
| ***Dhammam saranam pavajjāmi*** | -In that Dharma Iseek refuge. |

**Meaning**

***Arihantas, Siddhas, Sādhus*** and the ***Dharma*** preached by the ***kevalins*** i.e. omniscients- these four are auspicious and supreme, I seek refuge in these four.

**Explanation**

The ***Maṅgala Sūtra*** declares the four most auspicious things in the world and they are ***Arihants, Siddhas, Sādhus*** and the law preached by the ***Kevalins*** i.e. omniscients. These four are supreme in the world and an aspirant desirous of liberation

seeks refuge in the above four. For a spiritual aspirant nothing is more sacred than these four, as these inspire him and enable him to transgress the worldly sojourn. By seeking refuge in these four, the soul is reminded of his pure nature and sooner or later he succeeds in manifesting it. Through these four he seeks refuge in his spiritual personality, which is essentially not different from the liberated souls. As stated earlier ***Arihantas*** are the embodied pure souls, ***Siddhas*** are the disembodied pure souls in ***Nirvāṇa, Sādhus*** are the ascetics devoted to the contemplation of the self and the ***Dharma*** preached by the authoritative omniscients alone is capable of liberating the soul, hence these four are auspicious and supreme and so refuge is taken in these four.

The auspicious ones are of two types-worldly and spiritual. The worldly auspicious things are ephemeral and cannot beget eternal peace and joy. But the spiritual scientists of ancient India searched for the truly auspicious things in the world and discovered that nothing is superior than the spiritually-evolved, self-realized souls who are perfect and the best. They can never be inauspicious at any given time and place; the spiritual joy one experiences by realizing this is unique and cannot be expressed in words.

***Sādhu pada*** includes ***ācāryas*** and ***Upādhyāyas.*** It is due to the practice of ***'dharma'*** revealed by the omniscients that an aspirant can rise to Godhood i.e. ***Arhat*** and ***Siddha*** state after being an ascetic i.e. ***Sādhu*** by thought and deed. It is due to the practice of ***dharma*** the above three personalities have become worthy of worship, hence the power of ***'dharma'*** is supreme and unparalleled. These four enable the soul to transcend the worldly existence, hence are the best in all these worlds. These four inspire the ***ātman*** to become ***Paramātman*** after becoming Mahātman i.e. the soul becomes supreme soul, but only after being good and noble. Thus ***Dharma*** is the root of virtue and emancipation. It is the essence of life and living. It is said, ***"Dharmeṇa hināḥ paśubhiḥ samānāḥ"*** i.e. in the

absence of ***dharma*** one is like an animal. ***Dharma*** includes morality but it is not morality alone, it is more than morality where morality and spirituality put together.

None can give refuge to the soul in this world. Kith and kin, wealth and possessions-all are ephemeral and not reliable. They are here today, gone tomorrow; only fools trust them and seek shelter in them. The wise never hanker after them, instead seek refuge and shelter in the four supremes, which beget eternal joy and bliss. They make the soul fearless and immortal and thus protect it from the adversities of the worldly sojourn.

## वाह! जिनवाणी वाह!!

*श्री जिनेन्द्र कुमार जैन*

तूने दिव्य ज्योतिर्मय पाठ पढ़ाया
तूने भव्य जनों के अन्तर्हृदय को महकाया
क्या कहूँ मैं तू क्या बला है
तूने तो सारी बलाओं को बलपूर्वक भगाया
वाह! जिनवाणी वाह!!

कई तिरे, कई तिर रहे, कई तिरेंगे
तेरी ही कृपा से पथिक आगे बढ़ेंगे
तू ही तो है ज्ञान का सिन्धु
तुझ से ही प्यासे पिपासा दूर करेंगे।
वाह! जिनवाणी वाह!!

तेरा प्रभुत्व हमेशा कायम रहेगा
जीवन में प्रकाश छाया रहेगा
तू कर ले कितनी भी दूर रहने की कोशिश
साधक तो तेरे पीछे आता रहेगा
वाह! जिनवाणी वाह!!

*-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)*

प्रासङ्गिक

# निर्ग्रन्थ परम्परा के उज्ज्वल नक्षत्र : आचार्य हस्ती

*श्री पारसमल चण्डालिया*

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. का 99वां जन्म-दिवस पौष शुक्ला 14 दिनांक 10 जनवरी 2009 को उपस्थित हो रहा है। उसी प्रसंग में उनके गुण-स्मरण स्वरूप यह आलेख प्रकाशित किया जा रहा है। -**सम्पादक**

भारतीय संस्कृति श्रमण और ब्राह्मण संस्कृति के सुमेल से निर्मित हुई है। ब्राह्मण ब्रह्म का उपासक रहा है, तो श्रमण समता का उपासक रहा है। ब्राह्मण ने भौतिक शक्तियों पर विजय वैजयन्ती फहराई तो श्रमण ने मोह राजा की विराट् सेना को परास्त कर आध्यात्मिक उत्क्रान्ति की। श्रमण संस्कृति आत्म विजेताओं की संस्कृति रही है। उसने तन की अपेक्षा आत्मा को पुष्ट बनाने पर अत्यधिक बल दिया। आत्मा विकारों से मुक्त बने उसके लिए तप, जप व संयम को अपनाने का अधिक लक्ष्य रखा। यही कारण है कि श्रमण शब्द तपस्वी के अर्थ में व्यवहृत होने लगा। श्रमण का ही एक पर्यायवाची शब्द जैन परम्परा में 'निर्ग्रन्थ' है।

श्रमण संस्कृति के इतिहास का अवलोकन करने पर सहज ही परिज्ञात होता है कि हजारों श्रमणों ने संयम-साधना, तप-आराधना और मनोमन्थन कर अपने जीवन को पावन बनाया और जो भी उनके सम्पर्क में आए उनका जीवन भी साधना से जगमगाने लगा। उन श्रमणों की पावन परंपरा में आचार्य पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज का नाम बहुत ही निष्ठा के साथ लिया जा सकता है।

आचार्य श्री को याद करते ही संस्कृत कवि के शब्द स्मृति पटल पर अंकित हो जाते हैं-

> वदनं प्रसादसदनं, सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः।
> करणं परोपकरणं, येषां केषां न ते वंद्याः॥

जिनके मुख पर हमेशा प्रसन्नता रहती है, हृदय दया से छलकता है, वाणी में अमृत टपकता है, जो परोपकार में निरत रहते हैं, ऐसे महापुरुष सारे विश्व के लिए वंदनीय होते हैं। कथनी और करणी की एकरूपता लिए हुए आचार्यश्री का जीवन

भी ऐसा ही था। पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. एक आदर्श श्रमण निर्ग्रन्थ थे। उनमें ऐसी कई चारित्रिक विशेषताएँ थीं, जिनके कारण वे न केवल रत्नवंश में अपितु सम्पूर्ण जैन समाज में जन-जन की श्रद्धा के केन्द्र बन गये।

**परम्परा की परम ज्योति** – परम्पराओं का मनुष्य के जीवन-निर्माण में बहुत बड़ा हाथ है। जब व्यक्ति अपनी मर्यादा की लीक से हट कर बुराई की राह पर पैर बढ़ाने लगता है तब परम्परा ही उसे रोकती है। श्रमण कुल परम्परा का प्रभाव भी इतना जबरदस्त होता है कि वह पतन की ओर बढते हुए कदमों को रोक देता है। यही कारण है कि नंदी सूत्र में स्थविरावली (श्रेष्ठ स्थविरों की नामावली) प्रस्तुत की गई है ताकि श्रमण-श्रमणी वर्ग अपनी स्थविरकल्पी परम्पराओं पर स्थिर रह सके, स्थविर परम्पराओं की मर्यादाओं का उल्लंघन न करे।

प्रत्येक धर्म की शुद्ध एवं मौलिक परम्पराएँ इन चार मुख्य स्तम्भों पर टिकी हुई होती हैं - 1.देव, 2. गुरु, 3. धर्म और 4. संस्कृति। इनमें से एक भी स्तम्भ हिल जाए या एक भी स्तम्भ का आश्रय छोड़ दिया जाय तो धर्म का महल धराशायी हो सकता है। जैन धर्म परम्परा ने प्रायः इन चारों स्तम्भों का एक या दूसरे प्रकार से आश्रय नहीं छोड़ा, इनमें निर्बलता न आने दी, इस कारण हजारों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी जैन धर्म की मौलिक एवं शुद्ध परम्पराएँ अविच्छिन्न रही हैं।

काल प्रभाव से जैन धर्म परम्परा के पूर्वोक्त चारों मुख्य स्तम्भों में जब विकारों का दौर आने लगा, मौलिक परम्परा से हट कर शुद्ध देव,गुरु, धर्म के नाम पर अन्य विकृत परम्पराएँ चल पड़ी तभी कुछ महापुरुष आगे आए, जिन्होंने धर्म परम्परा की इस बुझती हुई ज्योति को पुनः प्रज्वलित किया। धर्मप्राण लोंकाशाह जैन धर्म परम्परा में आई हुई विकृतियों के कारण बुझती हुई मशाल को पुनः जगाने में अग्रणी थे। इसके पश्चात् पूज्य श्री लवजी ऋषि, पूज्य श्री धर्मसिंह जी, पूज्य श्री धर्मदास जी, पूज्य श्री रघुनाथजी स्वामी, पूज्य श्री जयमल जी म.सा., श्री रत्नचन्द जी म.सा. आदि अनेक ज्योतिर्धर आचार्य इसी क्रांतिकारी धर्मपरम्परा के प्रतिनिधि हुए जिन्होंने धर्मपरम्परा की इस ज्योति को प्रज्वलित किया और विकृति की आंधियों से इसे बचा कर सुरक्षित रखा।

इसी क्रांतिकारी धर्मपरम्परा की ज्योति को प्रज्वलित एवं सुरक्षित रखने वाले एक महान् ज्योतिर्धर आचार्य पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. हुए हैं। आपका

जन्म मारवाड़ के पीपाड़ शहर में सुश्रावक श्री केवलचन्द जी बोहरा की धर्मपत्नी श्रीमती रूपकंवर की कुक्षि से वि. सं. 1967 पौष शुक्ला 14 दिनांक13 जनवरी 1911 को हुआ। आपने मात्र 10 वर्ष 18 दिन की अल्पायु में आचार्यप्रवर पूज्य श्री शोभाचन्दजी म.सा. के पास अजमेर में माघ शुक्ला 2 वि.सं. 1977 दि. 10 फरवरी 1929 को भागवती दीक्षा ग्रहण की। साढे पन्द्रह वर्ष की उम्र में आपका संघनायक के रूप में चयन हुआ। वि.सं. 1987 वैशाख शुक्ला 3 को आपको इस क्रांतिकारी धर्मपरम्परा की ज्योति की सुरक्षा के योग्य समझकर चतुर्विध संघ ने जोधपुर में आचार्यपद से विभूषित किया।

श्रमण धर्म के जीवन कलश को संयमामृत से परिपूर्ण कर आपने जन–जन पर सद्गुणों का वर्षण किया। जीवन के सुनहरे क्षणों में भगवान् महावीर की वाणी **'भारंडपक्खी व चरेऽपमत्तो'** को पूरी तरह से उतारा और संयम के सरोवर में सद्गुणों के सहस्र पुष्प खिलाए।

पूज्य श्री जी के जीवन का हर पृष्ठ महानताओं से भरा है जिसकी अभिव्यक्ति शब्दों से नहीं की जा सकती, क्योंकि :–

ज्योति पुंज आचार्यप्रवर की गरिमा कुछ और है
अंबर अवनि में मयूर महिम का शोर है
कैसे संकीर्तन करूँ करुणा सदन आपका.
क्योंकि असलियत का कहीं ओर न छोर है।।

हिमालय से विराट्, सागर से गंभीर, चन्द्र से उज्ज्वल एवं सूर्य से तेजस्वी उन गुरुवर्य को शब्दों की सीमा से बांधें भी कैसे? इस धरती के सबसे ऊँचे माप थे वे, उन्हें मापने का कोई पैमाना हमारे पास नहीं है। अतः

क्या कहूँ कैसे कहूँ बात सूरज की, दीपक की जुबानी है।
जो भी कहूँगा अल्प ही होगा, सागर की गाथा बूँद की कहानी है।।

परम पूज्यवर, मानवता, नैतिकता, सामायिक स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक एवं प्रचारक बन कर धर्म गगन में गूंजते रहे और इस भूमंडल पर भगवान् की तरह पूजा पाते रहे। रत्नसंघ भास्कर, संयम सूर्य, धर्म सरोवर के राजहंस पूज्य हस्ती गुरुवर ने जीवन भर अपने नाम, उपमाओं का आदर्श जीवन जीकर सार्थक किया और अंत में संलेखना संथारा करके, अपने अंतिम मनोरथ को सफल बनाते हुए एक

अनमोल इतिहास रचाया।

**ज्योतिर्धर आचार्य–** नमस्कार सूत्र के पाँच पदों में तृतीय पद **'णमो आयरियाणं'** का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस पद के द्वारा उस आचार्य को नमन किया गया है जो निम्न छत्तीस गुणों का पालक हो–

पंचिंदियसंवरणो तह णवविह-बंभचेर गुत्तिधरो।
चउव्विह कसायमुक्को इअ अट्ठारस्स गुणेहिं संजुत्तो ।।1 ।।
पंच महव्वय जुत्तो, पंचविहायार-पालण-समत्थो।
पंच समिओ तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मज्झ ।।2 ।।

पाँच इन्द्रियों पर संयम; नव गुप्तियों के साथ ब्रह्मचर्य का पालन, क्रोध आदि चार कषायों पर विजय, अहिंसा आदि पाँच महाव्रतों का पूर्ण पालन, ज्ञानाचार आदि पाँच आचारों का पालन, ईर्या समिति आदि पाँच समिति तथा मनोगुप्ति आदि तीन गुप्ति के धारक, इस तरह ये छत्तीस गुण आचार्य में होने आवश्यक हैं।

आचार्य पूज्य श्री हस्ती इन गुणों से पूर्णतः समृद्ध थे। दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र की चौथी दशा में आचार विशुद्धि, शास्त्रों का विशिष्ट और तलस्पर्शी वाचन, स्थिर संहनन और पूर्णेन्द्रियता, वचन की मधुरता तथा आदेयता, अस्खलित वाचन व मूल अर्थ की निर्वाहकता, ग्रहण एवं धारणामति की विशिष्टता, शास्त्रार्थ में द्रव्य-क्षेत्र-शक्ति की अनुकूलता से प्रयोग करना, साधुओं के संयम निर्वाहार्थ साधन-संग्रह की कुशलता के रूप में जो आठ विशेषताएँ बताई गई हैं, वे भी आप में विद्यमान थीं।

वस्तुतः आचार्य श्री हस्ती हर दृष्टि हर प्रकार से इस पद के अनुरूप ही नहीं, वरन् उससे भी बढ़ कर थे। आप आचार्य पद के धारक तो थे ही, वास्तविक रूप से आचार्य पद के लक्षणों की योग्यता के धारक भी थे। एक दीपक सैकड़ों दीपकों को जलाता है और खुद भी प्रकाशित रहता है, ऐसे दीपकों के समान आचार्य स्वयं ज्ञान आदि गुणों से दीप्तिमान रहते हैं और उपदेश-दान आदि से दूसरों को भी दीप्तिमान बनाते हैं। कहा भी है–

जह दीवो दीवसयं पइप्पए जसो दीवो।
दीवसमा आयरिया, दिव्वंति परं च दीवंति ।।

आचार्य पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. भी अद्वितीय ज्योतिर्धर आचार्य थे। आपने दीपक की तरह स्वयं प्रकाशित होकर अपनी आत्मज्योति के प्रकाश से अगणित आत्मदीपों को प्रकाशित करने का कार्य किया। दीपशिखा की तरह आप हमेशा प्रज्वलित रहे। पहले तो आपने साधक रहकर स्वयं का निर्माण किया और तत्पश्चात् आचार्य बनकर चतुर्विध संघ का भावात्मक चहुँमुखी विकास किया और अपने पूर्ववर्ती आचार्यों से अपनी अलग पहचान बनायी।

आचार्यश्री के गौरवमय जीवन को शब्दों के परिधान से सुसज्जित करना अपनी सामर्थ्य के बाहर है। जैसे शरद पूर्णिमा का चाँद 28 नक्षत्र 88 ग्रह और 66 हजार 955 कोटाकोटि ताराओं के परिवार से घिरा निर्मल, मेघ रहित गगन में शोभायमान होता है वैसे ही आचार्य हस्ती अपने समय के चार तीर्थ के परिवार में शोभायमान थे। आपका सम्पूर्ण जीवन निष्कलंक चन्द्र के समान शीतल, सौम्य एवं प्रकाशयुक्त था। आप प्रत्येक छोटे-बड़े श्रमण के गुणों का विकास करने में पूर्ण सहायक होते थे। ऐसे ही गुणवानों के लिए रहीम कवि ने कहा है-

रहिमन राज सराहिए, ससि सम सुखद जो होय।
कहा बापुरो भानु है, तप्यो तरैयन खोय।।

**निर्ग्रन्थ परंपरा के उज्ज्वल नक्षत्र :-** निर्ग्रन्थ परम्परा का मुख्य आधार है - 1. सम्यग्ज्ञान, 2. सम्यग्दर्शन और 3. सम्यक् चारित्र का निर्मल पालन। आप अपने श्रमणाचार में अत्यन्त दृढ़ थे। रत्नत्रयी पर आपकी दृढ़ श्रद्धा थी। आचार्यश्री ने ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि में जनजन में धर्म-चेतना जागृत करने का प्रयत्न किया। स्वयं रत्नत्रयी की आराधना करते हुए आपने लोकोत्तर परंपरा को सुरक्षित रखने का पुरुषार्थ किया-

**सम्यग्ज्ञान की परम्परा :-** सम्यग्ज्ञान की परम्परा में जब तत्त्वज्ञान के विपरीत कुज्ञान या अज्ञान प्रविष्ट हो जाता है तब विकारों का प्रवेश होते और सम्यग्ज्ञान परम्परा की ज्योति बुझते देर नहीं लगती। सम्यग्ज्ञान की ज्योति के बुझते ही मनुष्य की विचारधारा और आचारधारा गलत दिशा में बहने लगती है। आगम मर्मज्ञ एवं व्याख्याकार, जैन इतिहास के अन्वेषक एवं प्रस्तोता आचार्य पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ने सम्यग्ज्ञान की आवश्यकता को महसूस करते हुए शास्त्रों का मंथन करके, सुरुचिपूर्ण एवं सुग्राह्य भाषा में आगम अनुवाद का कार्य प्रारम्भ किया। आपके

व्याख्यान सम्यग्ज्ञान-शास्त्रीय ज्ञान से इतने ओतप्रोत एवं सुरुचिकर होते कि जनता बरबस उनसे प्रेरित होकर नीति धर्म के सुपथ पर चल पड़ती थी। सामायिक-स्वाध्याय पर जोर देने वाली आपकी सम्यग्ज्ञानमयी अमृतवाणी जनता के अंतःस्तल को सहसा छू जाती थी। यही कारण था कि जैन-जैनेतर समुदाय एक स्वर से आपके व्याख्यानों से लाभान्वित होता था।

**सम्यग्दर्शन की परम्परा :-** आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ने देखा कि समाज में अंधविश्वास, दंभ, व्यक्ति-निष्ठा, भ्रांति, वहम आदि अनेक झंझावातों के कारण सम्यग्दर्शन की परम्परागत ज्योति बुझती जा रही है तो आपने समय-समय पर अपने प्रवचनों में इन विकारों पर गहरी चोट की। जनता को सम्यग्दर्शन के दूषित होने के कारण समझाए और सम्यग्दर्शन की सुरक्षा के उपाय भी बताए। इस प्रकार आपने सम्यग्दर्शन परम्परा की ज्योति प्रज्वलित रखी।

**सम्यक् चारित्र की परम्परा -** सम्यक् चारित्र के नाम पर दंभ, दिखावा, ढोंग, आडम्बर, मिथ्या चमत्कार, मायाचार, छल छिद्र या परनिंदापूर्ण व्यवहार आपको कतई पसन्द नहीं था। आप सहज सरलभाव से सम्यक्चारित्र या श्रमणाचार पालन के हिमायती थे। आप अपने आज्ञानुवर्ती संत-सतियों को भी समय-समय पर इसी प्रकार का उपदेश देते थे कि पंच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति युक्त सम्यक् चारित्र पर दृढ़ रहो। उसके अनुरूप जो मौलिक आचार या नियमोपनियम हैं उन्हें भलीभांति अपनी आत्मा एवं वीतराग परमात्मा के प्रति वफादार रह कर पालन करने का अहर्निश प्रयत्न करो। सम्यक् चारित्र परम्परा की इस ज्योति को विशुद्ध और सुरक्षित रखने का प्रयास करो। जहाँ कहीं भी प्रमादवश कोई गलती या त्रुटि हो जाए तो तुरन्त आलोचना, निंदना, गर्हणा, क्षमापना, प्रायश्चित आदि करके उसकी शुद्धि करो।

इस प्रकार आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के जीवन के इन पृष्ठों को देखते हुए यह निःसंदेह कहा जा सकता है कि आप निर्ग्रन्थ-परम्परा के उज्ज्वल नक्षत्र थे। आपश्री ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप धर्म परम्परा की अथवा देव-गुरु-धर्म-संस्कृति की शुद्ध एवं भौतिक परंपरा की एक प्रज्वलित एवं सुरक्षित परम ज्योति थे। आपने स्थानकवासी जैन-धर्म-निर्ग्रन्थ-परम्परा की इस शुद्ध एवं मौलिक ज्योति को अखंड प्रज्वलित एवं सुरक्षित रखा। आप श्री से चतुर्विध संघ

को भी ऐसी ही प्रेरणा मिलती रही।

**उपसंहार :-** आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. हर दृष्टि से महान् थे। आपश्री का जीवन बहुआयामी था। आपके जीवन में ज्ञान और क्रिया का विलक्षण सामंजस्य था। आचार निष्ठा, संयम प्रियता, मितभाषिता, सहिष्णुता, तेजस्विता, सरलता, गंभीरता, दीर्घदर्शिता, नम्रता, विद्वत्ता जैसे अनेक गुणों के कारण आप जन-जन के श्रद्धा-केन्द्र बने। सतत सजग रह कर आपने विशुद्ध आचार को अपने में जीया एवं संघ समाज में विमल आचार-विचार का शंखनाद फूंका। यही कारण था कि सम्पूर्ण जैन समाज आप से प्रभावित रहा। कहा है -

जग में जीवन श्रेष्ठ वही, जो फूलों सा मुस्कराता है।
अपने गुण से सारे जग के, कण-कण को महकाता है।।

आपके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक मनुष्य धर्मध्यान, त्याग, तप एवं जीवन की ओर उन्मुख हो जाता था। लोहा भी सोना हो जाता है पारस के छू जाने से। आपके सम्पर्क में आकर पापी भी पुण्यात्मा, विराधक भी आराधक और कलुष मन वाला भी पावन मन बन जाता था। ऐसे थे पारस पुरुष आचार्य हस्ती।

आज शरीर से भले ही पूज्य हस्ती नहीं रहे, परन्तु उनका आदर्श जीवन युगों-युगों तक साधकों के लिए प्रकाश स्तम्भवत् प्रेरणा प्रदान करता रहेगा।

*- 7/14, उत्तरी नेहरू नगर, विट्ठल बस्ती, नेहरू गेट के बाहर, ब्यावर-305901*

## वैराग्य

कँटीली झाड़ियों से भरे मैदान में नंगे पैर नहीं चला जाता। उसमें चलने के लिए या तो पूरे मैदान को चमड़े से ढक देना होगा या फिर अपने पैरों में चमड़े के जूते चढ़ाने होंगे। समूचे मैदान को चमड़े से मढ़ना असम्भव है, अतः पैरों में जूते पहनना ही उपयुक्त है। इसी तरह इस वासनापूर्ण संसार में असंख्य कामना-वासनाओं की पीड़ा से छुटकारा पाना हो तो या तो सभी वासनाओं की पूर्ति हो जानी चाहिए, या फिर सभी का त्याग हो जाना चाहिए। परन्तु वासनाओं की पूर्ति होना कभी सम्भव नहीं, क्योंकि एक वासना को पूरी करने जाओ तो दूसरी वासना आ खड़ी होती है। इसलिए ज्ञान-विचार और सन्तोष के द्वारा वासनाओं का त्याग करना ही उपयुक्त है।

*-'अमृतवाणी' से साभार*

विशिष्ट प्रश्नोत्तर

# उपासकदशांग सूत्र से पायें तात्त्विक बोध (14)

**प्रश्न1–महामाहण एवं महानिर्यामक के अभिप्राय में क्या अन्तर है?**

**उत्तर–** उपासकदशांग सूत्र के सप्तम अध्ययन में गोशालक के द्वारा शकडाल पुत्र के सामने भगवान् महावीर स्वामी के लिए महामाहण और महानिर्यामक शब्द प्रयोग किये गये। 'महामाहण' शब्द का अर्थ है, महा ब्राह्मण अर्थात् सबसे बड़ा ब्राह्मण या सर्व श्रेष्ठ ब्राह्मण। क्योंकि भगवान् महावीर अप्रतिहत ज्ञान-दर्शन के धारक हैं तथा तीनों लोकों द्वारा सेवित एवं पूंजित हैं एवं सत्कर्मरूपी सम्पत्ति से युक्त हैं, अतः वे महाब्राह्मण हैं।

श्री अभयदेव सूरि ने वृत्ति में लिखा है -"जो व्यक्ति यह निश्चय करता है कि मैं स्वयं किसी को नहीं मारूँ अर्थात् जो त्रिकरण, त्रियोग से हिंसा से निवृत्त हो जाता है, तथा हिंसा नहीं करने का दूसरों को उपदेश देता है, वह 'महामाहण' है। शाब्दिक दृष्टि से इसका अर्थ ज्ञानी है, अण् प्रत्यय के योग से इसकी सिद्धि होती है। (कर्मण्यण्-पाणिनीय अष्टाध्यायी 3-2-1)व्युत्पत्ति -"ब्रह्म वेदं शुद्धं चैतन्यं वा वेत्ति अधीते वा इति ब्राह्मणः।" अर्थात् जो ब्रह्मवेद या शुद्ध चैतन्य को जानता है अथवा उसका अध्ययन करता है वह ब्राह्मण है। उसमें भी जो महान् है, वह महाब्राह्मण है। जबकि महानिर्यामक का अर्थ है-"बड़ा मल्लाह (A Great Sailor) अर्थात् संसार रूपी महासमुद्र में बहुत से जीव नश्यमान, विनश्यमान व विलुप्यमान हैं, डूब रहे हैं, गोते खा रहे हैं, बहते जा रहे हैं, उनको सहारा देकर, धर्ममयी नौका द्वारा मोक्ष रूपी किनारे पर ले जाते हैं। वे महानिर्यामक-कर्णधार या महान् खेवैया कहलाते हैं। भगवान् में ये दोनों विशेषताएँ हैं।

**प्रश्न 2–अमनोज्ञ तथाअमनाम शब्दों के आशय में क्या भेद है?**

**उत्तर–** उपासकदशांग सूत्र अध्ययन 8 में इन शब्दों का प्रयोग हुआ है। रेवती के द्वारा महाशतक जी के सामने बार-बार भोगों की याचना करने पर महाशतकजी के द्वारा आवेश में आ जाने पर ऐसे शब्दों का प्रयोग कर

दिया गया था। ऐसे शब्द आदि विषय जो मन को अप्रिय हों, मन के प्रतिकूल हों वे अमनोज्ञ हैं। जो मनसाऽपि अनभिलषित हैं अर्थात् ऐसे शब्द आदि जिनको सुनने की व्यक्ति मन से भी इच्छा नहीं करता है, जो मन के द्वारा असुन्दर रूप से ज्ञापित होते हैं, वे अमनोज्ञ हैं।

'अमनाम'–मनसाऽपि प्राप्तुम् अयोग्यैः। अर्थात् मन से भी जो प्राप्त करने के योग्य नहीं हैं, वे शब्दादि अमनाम हैं (अमनाम न मनसा अभ्यते गम्यते पुनःपुनः स्मरणतो यत्तदमनोयम्)। जिन शब्दों का बार-बार स्मरण करना मन को अच्छा नहीं लगता है वे अमनाम शब्दादि हैं।

अमनोज्ञ शब्दादि तो वह है जिन्हें मन न तो बोलना चाहे, न ही सुनना चाहे, जबकि 'अमनाम' शब्दादि वे हैं जिन्हें मन न सोचना चाहे और न ही स्वीकार करना चाहे। यही दोनों में प्रमुख अन्तर है। अथवा-

अमनोज्ञ वह है जो आन्तरिक वृत्ति से भी अशोभन रूप से अनुभव में आवे तथा अमनोज्ञता तो कदाचित् तात्कालिक भी हो सकती है जबकि अमनामता वह है जिसका बार-बार स्मरण आदि भी करना व्यक्ति को अच्छा नहीं लगता।

**प्रश्न 3– लब्ध और प्राप्त शब्दों में क्या अर्थ भेद है?**

**उत्तर–** उपासकदशांग सूत्र अध्ययन छः में ये शब्द आये हैं। कुण्डकौलिक जी उस देव से प्रश्न करते हैं कि तुमने यह देव ऋद्धि आदि कैसे लब्ध और प्राप्त की है? लब्धः= उपार्जित, प्राप्तः=उपार्जितः सन् कथं स्वायत्तीभूतः। लब्ध अर्थात् उपार्जित और उपार्जित वस्तु को अपने अधीन करना उसका भोक्ता बनना 'प्राप्त' है। लब्ध का अर्थ है शक्ति रूप में प्राप्त होना, और प्राप्त का अर्थ है, उसका प्रकटीकरण होना। जैसे अवधिज्ञान की किसी को लब्धि है, और वह मिल जाता है तो वह प्राप्त कहलाता है। अथवा जैसे किसी के कर्म सत्ता में पड़े हैं, वह लब्धिवत् है और उनका उदय में आ जाना प्राप्तवत् है। व्यावहारिक उदाहरण द्वारा समझें- जैसे किसी व्यक्ति को किसी साहूकार ने खाली चैक में रकम भरकर तथा हस्ताक्षर करके दे दिया। यह रकम मिलने की उसे लब्धि (लब्ध) हो गई और वह व्यक्ति उस रकम को बैंक में जाकर भुनाकर रूपये प्राप्त कर लेता है तो यह प्राप्त करना कहलाता है। **(क्रमशः)**

जीवन-व्यवहार

# Vegetarianism
## (Life Style of Minimum Harm)

*Dr. Dharmendra Kankaria*

**Vegetarianism and Health**

It is a very happy augury that there is a great deal of discussion and interest about food habits in the context of health and nutrition, ecology and pollution as well as the moral and ethical questions about animal rights and animal welfare.

The particularly fotunate aspect in this context is based on the modern scientific and medical research in most developed countries, there is a great churning of ideas and many old established perceptions are being questioned in the light of the new data as well as social economic and global situations shaping and reshaping at amazing speeds.

**Our Heritage**

Vegetarianism has been a valued heritage of India. All religious and philosophical thoughts originating in India have emphasized the virtue of vegetarianism.

Buddhism and Jainism have elaborated the merits of 'Ahimsa'. Jainism in particular has laid absolute codes of conduct for 'Ahimsa' and vegetarianism, which are basic tenets of life with no laxity & aberrations.

"The instinct of self-preservation is universal. Every animate being wants to live and avoid untimely death. Nobody likes suffering. Therefore do not inflict suffering on anybody. " This is non-violence. This is equality.

**The Christian View point**

Many scholars believe that the early Christians were vegetarian. The first head of Church in Jerusalem after the death of Jesus, namely his brother, James the just, was a vegetarian and was raised as one. If James was raised as vegetarian, then it would be likely that Jesus also was so raised.

The early Christian Fathers adhered to a meatless regime. The writings of the early Church indicate that meat eating was not officially allowed until the 4th Century, when emperor Constantine decided that a meat-eating interpretation of the Bible became the official version of the Roman Empire. Vegetarian Christians had to practice in secret or risk being put to death. Thus, it is ironic that the pagan Rome would have such a profound influence on Christianity. "For I tell you, he who kills, kills himself and who eats the flesh of slain beasts eats the body of death."-Jesus

**Longevity**

The scientific evidence accumulating for about a hundred Years has prompted the ultra conservative British Medical Association to release a report stating categorically that vegetarians live longer than meat eaters. Vegetarians have 28% lower risk of dying from heart diseases and 39% lower risk of dying from cancer.

In general the life expectancy of vegetarians is about 6 years longer as compared to the meat eating persons. Also the quality of life for meat eaters becomes inferior owing to the incidence and suffering from long but debilitating strokes and heart attacks, obesity and reduced endurance.

One American gets cancer every 11 seconds and this is the second biggest killer. The blood pressure, osteoporosis, heart disease, diabetes, and cholesterol of meat eaters in the west are many times higher than the vegetarians.

Vilcambas (Ecuador South America), Abkhasians (Caucasus Europe), Hunzas (Pakistan Himalayas) and Okinawa (Japan) have globally the longest life span (90-100 years). These scattered groups are either totally vegetarian or close to it. They consume little or no flesh and dairy products.

Eskimos, the laplanders, the Greenlanders and the Russian Kurgi tribes consume highest flesh in the world and have the lowest life expectancy, only about 30 years.

The strong corelation between animal-based diet and

life expectancy is unmistakable.

**The Protein Myth**

The question of inadequacy of protein in a vegetarian diet is a myth. Scientific studies on the intake of amino acids (proteins)have shown that groups consuming foods from animal sources (meat, eggs, dairy products etc.) get twice their requirement of amino acids and some are getting five times. The excess is harmful and is rejected as excretions.

In a normal pure vegetarian diet, it is difficult to get less than 9% protein, if your caloric needs are met, whereas according to W.H.O. you need only 4% of protein calories (equinalent to about 40g.) in your diet.

A properly balanced vegetarian diet supplies all essential nutrients & vitamins and reduces intake of fat, cholesterol and excess iron, lowers your blood pressure and reduces your risk of over 160 life threatening diseases like cancer and heart disease. This is borne out by several research studies & a very comprehensive study carried out jointly by Carnell University (USA) Oxford University (UK) & the Chinese Academy of Preventive Medicine, covering 880 million Chinese citizens- (96 percent of China's population) and the partnership for the monumental survey and study continued for twenty years.

**Health in America**

In an average American Diet 15-16 percent of total calories come from protein and more than 80% of this comes from animal based foods.

America spends far more, per capita, on health care than any other society in the world, and yet two thirds of Americans are overweight, and more than 15 million Americans have diabetes. Americans suffer from heart diseases as often as thirty years ago and the campaign against cancer launched in the 1970s has been a miserable failure. Half of all Americans have a health problem that requires a prescription drug every week, and more than 100 million Americans have high cholesterol.

A government funded research project for Healthcare Research and Quality survey data collected between 1970 & 2004 'estimates that 86 percent of Americans would be overweight by 2030. By 2048 all US adults could be at least mildly overweight. It has been estimated that the healthcare costs directly related to excess pounds will double each decade, reaching $957 billion in 2030- accounting for one of every six healthcare dollars spent in the U.S.

**Starvation & Malnutrition**

40,000 People starve to death on this planet every day, three quarters of them children under the age of five. This is not because there is not enough food to go around. The real cause of hunger is not shortage of food but scarcity of justice, equitable distribution and compassion. So much of food is wasted every day in raising livestock for meat production, Which would otherwise be enough to provide every human being on earth with two or three loaves of bread per day.

"The day the hunger is eradicated from the earth; there will be the greatest spiritual explosion the world has ever known. Humanity cannot imagine the joy that will burst into the world on the day of that grain revolution." In our country, we had Gandhiji who urged us all "to live simply so that others might simply live."

**The Ethical Argument**

1) Conditions of animals live in factory farms : dark, crowded buildings where they never see the sun or breath fresh air.
2) Degree of overcrowding on factory farms : Animals are crammed into cages and stalls so small that they can barely turn around. Egg-laying chickens are crowded as tightly as five birds in a space no larger than that of a folded newspaper.
3) Treatment of animals transported to slaughter by lorry: Goats and cows are routinely crowded into lorries so tightly that they accidentally gouge each other with their horns or crush each other when they collaplse. Many animals sustain broken bones on the rocky road to slaughter.

4) Treatment of animals transported by foot : Marched animals are often denied food and water. Animals are beaten and have their tails broken in order to keep them moving.
5) Condition in which animals arrive at the slaughterhouse: Some animals arrive dead or too sick even to stand. Animals too sick to be fit for slaughter sometimes languish for days before they are killed or die.
6) How animals are slaughtered: Animals have their throats slit, sometimes with dull, rusty knives. In some instances, goats, sheep and cows have their legs hacked off or are skinned while still alive.

Just in U.S.A. 75 billion chickens are killed daily. Their beaks are cut off with a hot iron. Male chick babies are thrown into plastic bags where they are left to suffocate. Then they are ground up for animal food or fertilizer. Each year about 80 billion kg of fishes are eaten by humans and Nature cannot replace them fast enough.

In U.S.A. alone 22 million farm animals will be killed for food today. The killing goes on 24 hours a day, 365 days a year.

"The animals are confined to a crowded feed lot and are subjected to horrible conditions while living and in the slaughter house."

By cycling our grain through livestock we squander over 90% of its protein, over 96% of the calories, 100% of the fibre and 100% of carbohydrates. One wonders as to how such a blasphemy is being perpetrated on hapless human beings. The world's cattle alone, not to mention pigs & chickens consume a quantity of food equal to the needs of over 9 billion people- nearly 75% more than the entire human population of our planet at present. It is also pertinent to remember that a vegetarian diet can support a population growth for next 50 years which is not sustainable for even half the world population on a meat based diet at the present time.

**Vegetarian Movement**

In UK people give up meat every week. If this trend continues, an overwhelming majority of British people would be vegetarian by 2047. From 1984 to 1988 vegetarianism has increased by 113% and from 1988 to 1994 this figure has doubled itself again.

On moral, ethical, health and environment grounds, there is a remarkable awakening about vegetarianism in almost all developed countries.

**Healthy Vegetarianism**

It is important to remember that a vegetarian diet is necessary but not sufficient to guarantee good health. Eating fried food and soft drinks, even if vegetarian, is not going to benefit your health. Similarly, non-diet-related factors like exercising and stress-control are no less important than diet.

The vibrant message is that both vegetarian nutrition and exercise are important. "Exercise is the king, nutrition is queen, put them together with right attitude and you have got a Kingdom."

*- Society For Scientific & Ethical Living,*
*13-A, Guru Nanak Path, Main Malaviya Nagar, Jaipur-302017*

**सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित सत्साहित्य प्राप्ति के अन्य स्थान निम्न प्रकार हैं:-**

(1) श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001, (राजस्थान) फोन 0291-2624891 (2) **Shri Navratan ji Bhansali,** C/o. Mahesh Electricals, 14/5, B.V.K. Ayangar Road, **BANGALORE-560053** (Karnataka) Ph. : 080-22265957, Mob. : 09844158943 (3) **Shri B. Budhmal ji Bohra,** C/o. Bohra Syndicate, 53, Erullapan Street, Sowcarpet, **CHENNAI-79** (Tamilnadu) Ph. : 044-26425093, Mob.: 09444235065 (4) श्रीमती विजया जी मल्हारा, रतन सागर बिल्डिंग, कलेक्टर बंगला रोड, चर्च के सामने, जलगाँव-425001 (महाराष्ट्र) फोन : 0257-2223223

75 वें जन्म-दिवस पर

# हे संयमधाम! हे प्रज्ञापुंज!

मधुरव्याख्यानी श्री गौतम मुनि जी म.सा.

**उपाध्याय प्रवर पं.रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. का 75वाँ जन्म दिवस माघ कृष्णा चतुर्थी संवत् 2065 दिनाङ्क 14 जनवरी,2009 को उपस्थित हो रहा है। इस उपलक्ष्य में गुणगौरव का आख्यान करने वाली यह भावपूर्ण कृति प्रासंगिक है।-सम्पादक**

भोर से कुछ पूर्व, प्रार्थना के क्षणों में मुझे आभासित हो रहा शुभ्र शैल शृंग पर, निष्कलंक हिम की एकान्त निर्जन निःशब्द ऊँचाइयों पर प्रतिष्ठित एक प्रतिबिंब, जो अविचल है, सौम्य है, जिसके सुस्मित मुख मंडल पर इन्दु के समान स्निग्ध शान्ति झलक रही है।

उसकी करुणा की किरण पाकर मेरे प्राण जागृत हो उठे हैं, मेरी प्रार्थना के स्वर गा उठे हैं।

उच्च शैल शिखर पर भला वह कौन है?
'जहा अंतो तहा बाहिं' (जैसा अन्तस्थः वैसा बाह्यस्थ)
की उक्ति को चरितार्थ करने वाली एक जीवन्त प्रतिमा
जो आन्तरिक भावों की व्यंजक है, वैराग्य की प्रवर्धक है,
तेजपुंज ज्ञान की प्रकाशक है एवं वीतराग की उपासक है।
हे वैराग्य मूर्ति, मैं तुम्हें सूर्य की उपमा दूँ?

एक मुख मंडल जिस पर मुस्कान भरी महक है,
जिनवाणी की चहक है।
तुम तो शान्ति प्रदाता हो, अमृत बरसाते हो।
क्या मैं तुम्हें चन्द्र की उपमा दूँ?

अनुग्रहदाता, तुमसे हर आगत या अनागत को मिलती है निधि,
जीवन जीने की विधि।
तुम्हारा वैशिष्ट्य कि प्रत्येक को देते हो सम्मान,

सामान्य हो या धनवान,
परिचित हो या अनजान,
विद्वान हो या मतिमान!
सभी पाते हैं तेरी मांगलिक–लौकिक नहीं, अलौकिक
जो बन जाती है कल्याण की नैमित्तिक।
दर्शक को मिलता है दिशा बोध।

और वंदन की अभिस्वीकृति में मिला आशीर्वाद
सुख–साता की पृच्छा पर ध्वनित हुए शब्द 'आनन्द' है।
और आगंतुक को उसी में मिल जाता है– आनन्द का वर्षण,
पुनःपुनः दर्शन का आकर्षण।
हे प्रत्युत्पन्नमति गुरुवर, मुनि मानचन्द्र!
'मुनि' एवं 'चन्द्र' के विशेषणों के बीच 'मान' यानी अहं कैसे रह सकता है।
तुमने तो सुदूर अतीत में ही विनय को वरण कर लिया,
'मान' का शमन कर लिया।
'मान' सम्मान में रूपान्तरित हो गया।

तुम कहा करते हो
''मान समस्या है, मोह समस्या है,
और प्रेम उनका समाधान है।''
तुम सभी को प्रेम देते हो, अतः समाधान भी देते हो,
जो अन्तर के विद्वेष के विष को नष्ट करता है।
इसीलिये तुमसे प्राणवान है, उर्जावान है संघ
अनुशास्ता आचार्य गुरु हीरा के तुम मान हो, सम्मान हो,
तुम प्रेम से प्रेम का दीप जलाते रहते हो–
तो क्या मैं तुम्हें दीपक की उपमा दूँ?

कोई तुम्हें सरलता और सहजता का पर्याय मानता है,
कोई वैराग्य की मूर्ति कहता है,
कोई आराधक कहता है।
मैं तुम्हें क्या कहूं–सूर्य, चन्द्र या दीप?

या भूले भटकों का आश्रयदाता द्वीप?

हे अन्यतम साधक!
कोई तुम्हारे त्याग और वैराग्य के अजस्र प्रवाह को
चौथे आरे की बानगी मानता है,
कोई तुम्हें प्रेम का निर्मल स्वरूप मानता है।
लगता है तुम कवि की इस उक्ति को सार्थक कर रहे हो-
'जाकी रही भावना जैसी, हरि मूरत देखी तिन तैसी'

हे मंगल मूर्ति!
मुस्कान बिना शब्द की विश्वव्यापी भाषा है,
आन्तरिक उल्लास की परिभाषा है,
दूरस्थ दिलों के मिलन की आशा है, विश्वास है।
तुम कौनसी मुस्कान लेकर इस पृथ्वी पर आये हो
जो दुस्तर संसार की घोर विपदा के बीच भी
प्राणों की वीणा को झंकृत कर देती है।
तुम्हारी मुस्कान में निश्छलता है, निर्मलता है,
विरक्ति की उज्ज्वलता है एवं प्रमोद की प्रफुल्लता है।
तेरी मृदु मुस्कान पीड़ित मन को वरदान है,
मन की उलझन का निःशब्द समाधान है।
सुख में, दुःख में, निशीथ में, दिवस में, हर कोई मुस्कान में धन्यता का अनुभव कर रहा।
इस अनुभूति में सभी अमंगल शमित हो जाते हैं।
तेरी मृदुता का निर्मल निर्झर एक रहस्यमयी नदी से बहकर
सभी को आप्लावित कर रहा है।
हे देव, मुझे भी उस रहस्य में ले चलो और मेरे सभी कार्यों में मधुरता भर दो।

हे संयमधाम!
संयम जब अन्तर से जुड़ता है तो आराधना का आयाम बनता है।
प्रभावना का संधान बनता है,

गुणस्थान आरोहण का अवदान बनता है।
लेकिन संयम जब केवल बौद्धिक स्तर पर ही हो,
तो मात्र प्रदर्शन एवं लोकैषणा का स्थान बनता है
क्योंकि भाव और बुद्धि में अन्तर है,
बुद्धि में युक्ति बसती है, पर भावों में तहत की सुवास होती है
बुद्धि तो मानो गणित का विषय है
पर भाव तो श्रद्धा का आश्रय है।
तेरा संयम तो भावों का अधिष्ठाता है, भावों से ओतप्रोत है
इसीलिये वह तेरे मुख मंडल पर मुस्कान के साथ उभरता है।
उसकी आभा चहुं ओर बिखर रही है, निखर रही है।
उसके प्रति जन-जन में सम्मान है, समादर है।
इसीलिये तुम वरणीय हो, स्मरणीय हो, वन्दनीय हो।

हे सन्त प्रवर।
गाम्भीर्यता सन्तों की पहचान है
साधुत्व का परिधान है।
समरसता एवं सौहार्द गम्भीरता का अनुगामी है।
तेरे अनुभव का अमृत तेरे गाम्भीर्य गुण में झलकता है।
तेरी धीरता एक ऐसा दर्पण बन गया जिसमें भावुक मन अपने को निखारता रहता है।
'सागरवर गम्भीरा' की तरह तुम अपनी गम्भीरता में
सागर की मर्यादाओं का पाठ पढा रहे हो,
ज्ञान की गहराई बता रहे हो,
एवं समता से परीषह सहन की कला बता रहे हो।

हे अन्तर्मुखी!
मनुष्य अकेला आया है और अकेले ही जाता है।
पर वह अकेला रहता नहीं और न ही अकेला रहना जानता है।
जिस दिन तुम्हारी माँ ने मुक्ति पथ पर क्रीड़ा की वंशी
तुम्हें दे दी, तुम इसे बजाते बजाते,

अपने ही सुरों में मुग्ध होकर चलते-चलते
संसार की सीमाओं के परे सुदूर एकान्त में चले गये।
तुम्हारी यह एकत्व साधना नमिराज ऋषि के आख्यान को
जीवन्त बना देती है।
एकत्व भाव से अनासक्ति, अनासक्ति से निर्लिप्तता,
निर्लिप्तता से मुक्ति- यही तो वीतरागता का राज मार्ग है।
जिस पर तुम सतत प्रवाहमान हो।
अनुभवी ने कहा कि अति परिग्रह गृहस्थ के लिये
अनिष्टकारी है वैसे ही अतिपरिचय संत के लिये अनिष्टकारी है।
"गिही संथवं न कुज्जा"
तुमने तो इस आगम वाक्य को हृदयस्थ कर लिया है।

हे महर्षि!
तुम एक अनुपम विरोधाभास से युक्त हो।
लोगों के संग रहकर भी निःसंग हो,
मर्यादा के बन्धन में रहकर भी आत्मस्वरूप की चेतना से युक्त हो,
संसार को सुनते हुए भी जिनाज्ञा में अनुरक्त हो।
सबको आकर्षित करते, पर स्वयं आकर्षित नहीं होते,
सबको जोड़ते पर स्वयं नहीं जुड़ते।
सबके आलम्बन पर स्वयं निरालम्ब
रास्ता बताते हो, पर रिश्ते नहीं बनाते,
सम्मोहित करते पर स्वयं निर्मोही रहते,
सबको प्रभावित करते, पर स्वयं स्वभाव में रहते।
तुम्हारा दर्शन वशीकरण मन्त्र, पर तुम स्वयं स्वतन्त्र।
द्रष्टाभाव में रहते हुए भी बेजान के लिये जागृति के अमृत हो।
तुम्हारा जीवन श्रेय है, औरों के लिये पाथेय है।

हे प्रज्ञापुंज!
विवेक पूर्वक सद्भाव से लिये गये निर्णय,

श्रेष्ठ इतिहास का आधार बनते हैं,
परमार्थ की प्रभावना का द्वार बनते हैं,
मिथ्या अवधारणाओं का संहार करते हैं ,
पापाचार का परिष्कार करते हैं ।
विवेक यानी हिताहित का ज्ञान एक अनुपम उपहार है,
आत्मगुणों की उपलब्धि उसका पुरस्कार है ।
सकारात्मक सोच विवेक की ही परिणति है ।
विवेक में रूपान्तरण की अद्भुत क्षमता है तो
कटुता को मधुरता में, चिन्ता को चिन्तन में,
और विभाव को स्वभाव में बदल देता है ।
तुम में विवेक की आभा है, यही तुम्हारी शोभा है ।
विवेक आदर्श जीवन का महत्त्वपूर्ण अध्याय है,
और तुम विवेक के पर्याय हो ।
तेरे विवेक से रोशनी छलक रही है, चेतना बरस रही है ।
हे आप्त, तेरी प्रज्ञा से संघ प्रदीप्त है ।

भोर हो गया है, मैं पुलकित हूँ,
उषा की सुनहरी वीणा के तार बजने लगे हैं ।

प्रार्थना के इन क्षणों में मेरे गीत मुक्तिगामी मेघों पर बैठकर
तेरी अर्चना करते हुए गा रहे हैं-
'नमो उवज्झायाणं....नमो उवज्झायाणं'
मेरी प्रार्थना के सरगम के आरोहण के
इस अन्तिम चरण को हे उपाध्यायप्रवर स्वीकार लो, स्वीकार लो ।

बालोतरा में 24 दिसम्बर, 2008 को अपराह्न में जन समूह के मध्य जब पूज्य उपाध्यायप्रवर के धीरता, गम्भीरता, सौम्य मुस्कान और विवेकयुक्त आदर्श जीवन की चर्चा चली तो मधुर व्याख्यानी श्री गौतम मुनिजी म.सा. ने इस चर्चा को ओर आगे बढ़ाते हुए अपना एक लिखित गुण-चिन्तन सबको सुनाया, जिसका संपादन 'श्री सम्पतराज जी चौधरी',दिल्ली ने किया तथा संकलन 'रतनी जी बांठिया', बालोतरा ने किया ।

युवा-स्तम्भ

# नया वर्ष - नया संकल्प

*श्री दिलीप जैन*

**विकास**–मैंने गत वर्ष को व्यर्थ ही गंवा दिया। अपने लक्ष्य को निर्धारित नहीं कर पाया, समय के मूल्य को नहीं पहचाना। न माता-पिता की सेवा की, न अन्य क्षेत्र में पुरुषार्थ किया। मैं बहुत अभागा हूँ, आचरणहीन हूँ एवं आलसी प्रवृत्ति से युक्त हूँ।

**विश्वास**–कोई बात नहीं मित्र! पुरातनता का वेष इस पुराने वर्ष के साथ त्यागकर, नवीन लक्ष्य, नवीन विचारकण एवं सकारात्मक क्रिया पद्धति को अपनाकर कार्य करो, क्योंकि भूतकाल इतिहास है और भविष्य अंधकार युक्त है, इसलिए वर्तमान को स्वच्छ व सुन्दर बनाओ। इससे भविष्य स्वतः सुन्दर बन जायेगा।

**विकास**–किन्तु मित्र! मैंने गत वर्ष संकल्प किया था कि मैं 9 व्यक्तियों को निर्व्यसनी एवं धर्मावलम्बी बनाऊँगा, इसे मैं पूरा नहीं कर पाया।

**विश्वास**–हे प्रिय मित्र! जिस प्रकार मल्टीनेशनल कम्पनियों में लक्ष्य (Target) को पूरा नहीं करने पर पिछला बकाया (Last Pending) अग्र हस्तांतरित (Forward) हो जाता है उसी प्रकार तुम भी यह निश्चय करो कि इस वर्ष मुझे 9 व्यक्ति पूर्व के एवं 10 व्यक्ति इस वर्ष अर्थात् 19 व्यक्तियों को निर्व्यसनी एवं धर्मनिष्ठ बनाना है।

**विकास**–अरे मित्र! गत वर्ष मैंने अपने मित्रों के मनोरंजनार्थ अपने अन्य सहपाठियों का उपहास किया, उनके प्रति द्वेषपूर्ण आचरण किया एवं उनकी चुगलखोरी की जिसके कारण मैं सबकी हीलना का पात्र बन गया हूँ।

**विश्वास**–कोई बात नहीं मित्र! युवावस्था में दूसरों के वशीभूत होकर हम ऐसी प्रवृत्तियाँ कर बैठते हैं; परन्तु उन्हें सुधारने के अवसर को नहीं गंवाना चाहिए, अतः इस वर्ष से अपनी प्रकृति एवं प्रवृत्ति में परिवर्तन करके तुम सभी के प्रीति-पात्र बन सकते हो।

**विकास**–मैंने सोचा था कि मेरे द्वारा संगठित युवा संघ को इस वर्ष प्रगति के रथ पर

आरूढ़ कराऊँगा, विकास के कई चहुँमुखी आयामों से सुसज्जित करूँगा, परन्तु क्रियान्विति के अभाव में सोच मात्र सोच ही रह गयी।

**विश्वास**–हे परम मित्र! अपने जीवन में इन तीन पायदानों का अवश्य ध्यान रखना। (1) लक्ष्य बनाओ (2) कदम बढ़ाओ (3) मंजिल पाओ। इनके अभाव में या एक ही पायदान से कार्य की सम्पन्नता अधूरी रहती है, जिस प्रकार प्यास बुझाने का साधन पानी है, पर सोचने मात्र से प्यास नहीं बुझती, अतः इस वर्ष से यह संकल्प करो कि सोच के साथ क्रियान्विति परमावश्यक है।

**विकास**– मौज–मस्ती व ऐशो आराम में रहकर मैंने अपने अध्ययन की गति को शून्य मात्र ही रखा, लापरवाह होकर यूं ही दिन व्यतीत करता रहा, परन्तु अब मित्र परीक्षा नजदीक होने से परिणाम के विषय में भयातंकित हूँ।

**विश्वास**–मित्र! "होते हैं जिनमें हौंसले, मिलते हैं उनको रास्ते" अतः यह नया वर्ष तुम्हारे दृढ़ विचारों एवं नियमित चर्या से तुम्हें अध्ययन में नयी स्फूर्ति प्रदान करेगा, बशर्ते तुम्हें अपने समय का नियोजन पूर्ण ईमानदारी से करना होगा।

**विकास**– हे मित्र! ये सब चर्चाएँ तो मात्र बाहरी कल्याणार्थ एवं अपने स्वार्थ को पूरा करने वाली थी, परन्तु मैंने तो अपने जीवन के 22 सावन गंवा दिए, फिर भी आत्मकल्याण का कोई भी कार्य नहीं किया। मैं जैन कुल में उत्पन्न हुआ, परन्तु नवकार मंत्र तक का स्मरण नहीं किया। मैं पुण्यहीन, पापाचरित्र व्यक्ति हूँ।

**विश्वास**–धीरज रखो मित्र! तुमने सुना होगा "जब जागो तभी सवेरा" अर्थात् अभी भी कोई देर नहीं हुई है। इस वर्ष का यह एक नया संकल्प और आत्मकल्याण का मंत्र ग्रहण करो कि अब से मैं नियमित नवकार मंत्र की माला जपूँगा तथा समयानुकूल सामायिक–स्वाध्यायादि करूँगा।

**विकास**–हे मित्र ! मैं किस प्रकार तुम्हें धन्यवाद प्रदान करूँ, क्योंकि तुमने मेरे अन्दर नयी चेतना, नयी स्फूर्ति एवं नव विचारों का संचरण किया है। मैं यह संकल्प करता हूँ कि इस वर्ष से मैं भी एक वीर, साहसी, नेक, धर्मावलम्बी एवं सरल प्रकृति का बनने का प्रयास करूँगा।

क्या हम सभी विकास की तरह शून्य मात्र जीवन तो नहीं जी रहे हैं? क्या हम भी अपने कार्यों को मात्र सोचकर ही सन्तुष्ट बने हुए हैं? यदि हाँ तो आइये इस नव वर्ष से शुरुआत करते हैं एक ऐसे 'विश्वास' के साथ जो कि हमारा मार्ग प्रशस्त करे।

*- अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर - 342001*

# परिग्रह का आदर

*आचार्य श्री विद्यासागर जी म.सा.*

मात्र बाह्य वस्तुओं के ग्रहण का नाम परिग्रह नहीं है। बाह्य पदार्थों के प्रति जो अटेचमेंट है, लगाव है उसके प्रति जो रागानुभूति है, उसमें जो एकत्व की स्थापना का भाव है वह परिग्रह है। जहाँ आप रह रहे हैं वहीं पर अर्हन्त परमेष्ठी भी हैं, साधु परमेष्ठी भी हैं, वहीं पर और भी पुनीत आत्माएँ रह रही हैं, किन्तु वही स्थान आपके लिए दुःख का स्थान बन जाता है और वह उन आत्माओं को जरा भी प्रभावित नहीं करता, सुख-दुःख का कारण नहीं बनता। वास्तव में पदार्थ दुःख-सुख का कारण नहीं है, अपितु उसके प्रति जो मूर्च्छा-भाव है, जो ममत्व है वही दुःख का कारण है। इसी का नाम परिग्रह है।

विशालकाय हाथी को कोई बांध नहीं सकता। वह स्वयं बंध जाता है, उसकी मूर्च्छा उसे स्वयं बंधन में डाल देती है। इसी प्रकार तीन लोक को जानने की अनन्त-शक्ति और अनन्त-आलोक जिस आत्मा के पास विद्यमान है वह आत्मा भी मूर्च्छित है, सुप्त है, जिससे उसकी वह अनन्त शक्ति भूलुण्ठित हो रही है। आप चार पापों के प्रति अत्यंत सावधान हैं। आप हिंसा से परहेज करते हैं, झूठ से बचते हैं, 'चोरी नहीं करूँगा' ऐसा संकल्प ले सकते हैं और लौकिक ब्रह्मचर्य के प्रति भी आपकी स्वीकृति है, किंतु परिग्रह को आप विशेष रूप से सुरक्षित रखे हुए हैं। वह पाप मालूम ही नहीं पड़ता।

आज हिंसा करने वाले का कोई आदर नहीं करता, झूठ बोलने वाले और चोरी करने वाले का भी अनादर ही होता है, लेकिन परिग्रही का आज भी आदर हो रहा है। जितना परिग्रह बढ़ता है वह उतना ही बड़ा आदमी माना जा रहा है, जो कि धर्म के लिए सत्य नहीं है। धर्म कहता है कि परिग्रह का समर्थन सारे पापों का समर्थन है। आप धर्म चाहते हैं, किन्तु परिग्रह को छोड़ना नहीं चाहते। इससे यही प्रतीत होता है कि आप अभी धर्म को नहीं चाहते। धर्म तो अपरिग्रह में है।

*-'समग्र' पुस्तक से साभार*

धारावाहिक (क्रमशः 56)

# जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

**पूर्ववृत्तः**- "जम्बूकुमार अपनी आठवीं पत्नी जेतश्री के तर्कों का उत्तर देते हुए बसन्तपुर के राजा सत्यप्रभ की रानी का दृष्टान्त देते हैं। रानी मलिन भावों से ग्रस्त थी, श्रेष्ठिपुत्र ललितांग पर मुग्ध हो जाती है एवं ललितांग उसके चक्कर में पड़कर दुःखों का भाजन बनता है। जम्बूकुमार इसी सन्दर्भ में जेतश्री से आगे कहते हैं -

प्रिये! जिस शरीर में सभी अपवित्र एवं घिनौने पदार्थ भरे हुए हैं, जिसमें मल-मूत्र का ढेर लगा रहता है, सदा जिससे घृणास्पद पदार्थों के झरने बहते हैं, उस शरीर पर भी कामी जन मोहित हो जाते हैं, यह अज्ञान की पराकाष्ठा है, मोह का विलास है।

शरीर वास्तव में महा अपवित्र है। हाड़ मांस, रुधिर आदि गंदे पदार्थों से इसका निर्माण हुआ है। करोड़ों रोम इस शरीर में हैं और उन सबसे तथा नौ द्वारों से सदा मैल निकलता रहता है। पवित्र चन्दन आदि पदार्थ भी इस शरीर का संयोग पाकर अस्पृश्य एवं अपावन हो जाते हैं। यह मिट्टी के घड़े के समान कच्चा है। रोग, शोक आदि की थोड़ी सी ठोकर लगने पर ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। जब शरीर स्वस्थ रहता है तब भी वह अनेक प्रकार की झंझटें उत्पन्न करता है। उदर शरीर का ही एक अंग है और उसकी पूर्ति के लिए लोगों को कितने कष्ट नहीं उठाने पड़ते। संसार में अगणित प्राणी केवल उदरपूर्ति करने के लिए ही अपने जीवन की इति कर देते हैं। शीत से और उष्णता से बचने के लिए सदैव चिन्ताशील रहना पड़ता है। फिर भी अन्त में यह धोखा दे जाता है। ज्ञानार्णव में कहा है-

अजिनपटलगूढं पञ्जरं कीकसानाम्,
कुथितकुणपगन्धैः पूरितं मूढ गाढम्।
यमवदननिषण्णं रोगभोगीन्द्रगेहम्?
कथमिह मनुजानां प्रीयते स्याच्छरीरम्?

अर्थात् हे मूर्ख मनुष्य! यह शरीर,जिस पर मोहित होकर तू धर्म से विमुख हो रहा है और परलोक को भुला बैठा है, चमड़े के चादर से ढका हुआ हाड़ों का पींजरा है। यह बिगड़ी हुई बदबूदार पीप से भरा हुआ है। रोग रूपी सांपों का घर है, और यमराज के मुंह में बैठा हुआ है। ऐसी अवस्था में क्या यह शरीर प्रेम करने के योग्य है? कदापि नहीं।

मगर कुत्सित वासनाओं से वासित कामी जन शरीर के इस वास्तविक रूप को नहीं देखते। वे अशुचि पदार्थ में आनन्द मनाने वाले कीड़े की तरह इस अशुचि के पिण्ड में रमण करते हैं। उनमें शरीर के प्रति घृणा का भाव भी नहीं उत्पन्न होता, अस्तु।

रानी ने ललितांग को देखा तो उसका मन चंचल हो गया। वह उसकी ओर एक दम आकृष्ट हो गई। तत्काल उसने अपनी निजी दासी के द्वारा ललितांग को महल में बुलवा लिया। ललितांग के उपस्थित होने पर उसके समक्ष उसने अनेक हाव-भाव-विलास-चेष्टाएँ करके अपनी कामना को पूर्ण करने का प्रस्ताव किया। संसार में स्त्रियों का आकर्षण पुरुष के लिए सबसे अधिक प्रबल है। बड़े-बड़े यति-मुनि भी इस आकर्षण को सहन करने में असमर्थ हो जाते हैं। ललितांग भी रानी की कुचेष्टाएं देखकर अपने धर्म की रक्षा न कर सका। वह कामवासना का शिकार हो गया और इस प्रकार दोनों अपने धर्म से पतित हो गए। दोनों जब एक से मिल गए तब धर्म रक्षा हो ही कैसे सकती थी। गधे ने कुत्ते का मुंह चाट लिया तब गंगाजी किसे भेजा जाए?

ललितांग और रानी दोनों में वार्तालाप हो ही रहा था कि उसी समय ड्योढ़ी से महाराज के आगमन की सूचना मिली। यह सूचना पाते ही ललितांग और रानी-दोनों की घबराहट का पार न रहा। सच है- पापियों के हृदय में एक प्रकार की निर्बलता आ जाती है। पाप-वासना शक्ति और हिम्मत का नाश कर देती है। पापी का हृदय कांपता रहता है। उसे अत्यन्त व्याकुलता सताती रहती है। निरन्तर शंकाशील रहने के कारण उसकी शांति स्वाहा हो जाती है। वह डरपोक बन जाता है और नैतिक शक्ति से तो हाथ ही धो बैठता है। तदनुसार राजा के आगमन की सूचना मिलते ही दोनों पीपल के पत्ते की तरह थर-थर कांपने लगे। उन्हें अपने प्रबल पाप का शीघ्र ही उदय आता दिखाई देने लगा। रक्षा का कोई उपाय जब नहीं दिखाई दिया तो ललितांग अंपने पाप के लिए घोर पश्चात्ताप करने लगा। पर पाप तो इतना गुरुतर था कि मात्र

पश्चात्ताप से पर्याप्त प्रायश्चित्त होना असम्भव था। अन्त में अत्यन्त विकल होकर ललितांग ने कहा-

**ललितांग**-रानीजी, मैं अपने रास्ते घूमता हुआ जा रहा था। आपने यहाँ बुलाकर मेरी यह दुर्दशा कराई है।

**रानी**-वाह! क्या कहना है! आप बड़े धर्मात्मा और सदाचारी बन रहे हैं और सारा दोष मेरे मत्थे मढ़ रहे हैं!

**ललितांग**- तो क्या मैं अपने आप आपके पास आया था।

**रानी**- न सही अपने आप, पर आए तो तुम्हीं मेरे यहाँ हो। मैं तो तुम्हारे पास नहीं गई।

**ललितांग**- रानी, तुम्हीं ने मुझे विपत्ति में फंसाया है। इसका तमाम उत्तरदायित्व तुम्हारे सिर है।

**रानी**-बको मत ललितांग, तुम बिना कहे-सुने ही चोरी से मेरे महल में घुस आए हो। तुम मेरे सतीत्व को कलंकित करना चाहते थे।

**ललितांग**- स्त्रियां सचमुच ही क्या इतनी अधिक मायाविनी होती हैं। तुम स्वयं निर्दोष बनने के लिए मेरे प्राण लेना चाहती हो क्या? पर याद रखो, इससे तुम्हारा कलंक धुल नहीं सकेगा। मैं दरबार में सारी घटना साफ-साफ कह दूंगा और उस दासी को, जो मुझे बुलाने आई थी, साक्षी के रूप में पेश करूँगा।

**रानी**-ललितांग, नराधम! तू मुझ पर बलात्कार करना चाहता है। आने दे महाराज को। मेरे सतीत्व का अपहरण करने यहाँ आ गया है।

**ललितांग**- ऐसी बातों से काम नहीं चलेगा। रानी! विषयी जीव स्वार्थी होते हैं। उनके अनुराग का कुछ भी मूल्य नहीं होता। फिर भी इससे तुम्हारी और मेरी- दोनों की अप्रतिष्ठा होगी और दोनों को अपने प्राण गंवाने पड़ेंगे। इसलिए मायाचार की बातें छोड़ो। महाराज पहुँचने ही वाले हैं। शीघ्र कोई उपाय करो जिससे दोनों की इज्जत-आबरू बनी रहे।

**रानी**- अब ठिकाने पर आए! देखो, प्राण बचाने का अब एक ही उपाय है। तुम पाखाने में घुस जाओ। राजा देख नहीं सकेगा।

ललितांग के लिए यह अच्छा सबक था। पाखाने में उतरने का उसका जी न होता था। दुर्गन्ध और घृणा के भय से वह मरा जा रहा था। पर

दूसरी ओर प्राणों की रक्षा का प्रश्न था। प्राण-रक्षा का दूसरा कोई उपाय न देख उसने वही विकल्प स्वीकार किया। वह नीचा सिर और ऊपर पैर करके पाखाने में उतर गया। पर बीच में बुरी तरह फंस गया। निकलना उसके लिए सम्भव न था। पाखाने में राजा वगैरह मल मूत्र का त्याग करते तो वह सब उसके शरीर पर ही होकर नीचे जाता था। वह न इधर आ सकता था न उधर जा सकता था। दासी किसी प्रकार रोटी देती तो उसे खाकर वह नौ दिनों तक जीवित रहा।

ललितांग के किसी पूर्वजन्म के पुण्योदय से वर्षा ऋतु आ गई। जोरों से वर्षा हुई। इधर पाखाने में लटका-लटका वह दुबला हो गया था। अतएव पानी के प्रबल बहाव के कारण वह संडास से बाहर निकल गया। दुर्बलता बेहद बढ़ गई थी अतएव वह पानी के बहाव का भी मुकाबला न कर सका और बहता गया। किसी जगह किसी ने उसे बहता देखकर पानी में से निकाला।

दूसरी ओर श्रीधर श्रेष्ठी अपने पुत्र को अचानक गायब हुआ देखकर अत्यन्त चिन्तित हो गए थे। उन्होंने उसे खोज निकालने के सभी संभव उपाय किए, पर कहीं किसी प्रकार भी पता न चला। फिर भी उन्होंने अपना प्रयत्न चालू रखा और रात-दिन उसी की खोज में लगे रहे। आज अपने प्राणप्रिय पुत्र को अचानक इस अवस्था में देखकर उसे हर्ष और विषाद दोनों भावों का एक साथ अनुभव होने लगा। पुत्र-प्राप्ति का हर्ष था और उसकी शारीरिक दुरवस्था को देखने पर उसे विषाद हो रहा था। फिर भी उसने पुत्र-प्राप्ति को अपने पुण्य का उदय समझा और वह उसे अपने घर ले गया। अनेक प्रकार की औषधियों का सेवन उसे कराया गया तब कहीं ललितांग स्वस्थ हुआ। इस प्रकार धीरे-धीरे वह अपनी खोई हुई शारीरिक सम्पत्ति को प्राप्त कर पाया।

कुछ समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् ललितांग फिर एक बार राजमहल के समीप होकर निकला और संयोगवश फिर रानी ने उसे देख लिया। रानी की मलिन भावना फिर जागृत हो गई और उसने फिर ललितांग को दासी भेजकर बुलवाया!

**जम्बूकुमार पूछने लगे-** अब भद्रो तुम्हीं कहो ललितांग रानी के पास जाएगा या नहीं?

**जेतश्री-** अब वह कदापि नहीं जाएगा, कम से कम यदि उसमें रंच

मात्र भी विवेक विद्यमान हो तो उसे हर्गिज नहीं जाना चाहिए।

**जम्बूकुमार**- यदि ललितांग में थोड़ा भी विवेक है तो उसे नहीं जाना चाहिए, यह कथन बिल्कुल उचित है। पर जेतश्री! क्या मुझमें ललितांग के बराबर विवेक नहीं है, जो मैं तुम्हारे आग्रह को स्वीकार कर फिर विषयभोग के कीचड़ में फँसू? इस उदाहरण को समझो। देखो- ललितांग के समान संसारी जीव है। राजा के स्थान पर तीनों लोगों की प्रजा पर अखण्ड और निष्कंटक शासन करने वाला यमराज है। विषय वासना को रानी के स्थान पर समझना चाहिए। कुमति रूपी दासी है। महल के समान मनुष्य गति में जीव बुलाया गया है। यमराज रूप राजा के आगमन की सूचना मिलते ही जीव की काया कांपने लगती है। उसके बाद संडास के समान अतीव घृणास्पद और मलिन जननी के जठर में जीव प्रवेश करता है। वहाँ झूठे टुकड़ों के समान माता-पिता के रजवीर्य से शरीर का पोषण होता है। माता के शरीर का मल-मूत्र उसके पास से होकर निकलता रहता है। इसी प्रकार कष्टमय जीवन बिताते-बिताते जब नौ महीने और कुछ दिन पूरे हुए तब पुण्य रूप जल की वर्षा होने पर मैंने जन्म धारण किया है।

जन्म धारण करने के पश्चात् माता-पिता आदि ने स्नेह के साथ मेरा पालन-पोषण किया है। ऐसी अवस्था में क्या मैं फिर विषय-वासना का शिकार बन सकता हूँ? भले ही हजार प्रेरणा विषय-वासना की ओर से हो, पर मुझ में यदि विवेक है तो उससे मुझे बचना ही उचित है। प्रिय! यह निर्णय तुम्हारे मुख द्वारा हुआ है और इससे बदलने का अब तुम्हें अधिकार नहीं है।

मैं अज्ञानी था। आत्मा और अनात्मा के भेद को भूला हुआ था। आत्मिक सुख की प्राप्ति के उपायों से विमुख होकर दुःखों के मार्ग पर चला जा रहा था। श्री सुधर्मा स्वामी ने मुझे सावधान किया है। उन्होंने मुझे सुख के पथ पर अग्रसर किया है। मुझ पर उनका अनन्त उपकार है। जिन्होंने अक्षम कल्याण का पथ प्रदर्शित करके मेरे जीवन में लोकोत्तर आलोक भर लिया है, जिन्होंने मेरी आँखों में दिव्य ज्योति जगा दी है, जिनके प्रताप से मेरे हृदय का अन्धकार विलीन हो गया है, जिन्होंने मेरी भुजाओं में संसार-सागर को सकुशल पार करने का असीम सामर्थ्य दिया है, उन गुरु महाराज के उपकारों से मैं उऋण नहीं हो सकता हूँ। उनके चरणों में मेरी प्रार्थना हैः-

मेरे हृदय सागर में जब-जब, उठे कामना का तूफान।
विषयासक्ति भंवर में डूबे, जब मेरा छोटा सा यान।।
केवट मोह-सुरा का प्याला,पीकर खो बैठा हूँ ज्ञान।
तब-तब मुझे बचाना मेरे गुरु! जलयान महान्।।
माया मत्सरता कायरता, मुझे बनावें अपना दास।
ममता मेरे ऊपर फेंके, अपना मृदुल भयंकर पाश।।
मेरे लिए खोल देना तब, आत्म शक्ति का वर भण्डार।
हँसते-हँसते झेल सकूँगा, कोमल और कठोर प्रहार।।

जेतश्री! गुरु महाराज के प्रसाद से जब मैंने विषयभोगों के भीतरी रूप को भलीभांति समझ लिया है तब उनमें फंसाने का तुम्हारा आग्रह व्यर्थ है। अब वह काम नहीं आ सकता।

जेतश्री! मैंने जो निश्चय किया है उसे संसार की कोई भी विरोधी शक्ति नहीं टाल सकती। पर मैं तो यह कहता हूँ कि तुम्हें भी मेरे ही पथ पर चलना चाहिए, क्योंकि इसके बिना कल्याण का सच्चा सन्मार्ग दूसरा नहीं है। जो सच्चे सुख की अभिलाषा करते हैं उन्हें चाहिए कि वे तदनुकूल उपायों का अवलम्बन करें। उससे विरुद्ध उपाय करने से और उलटे मार्ग पर चलने से सिद्धि नहीं हो सकती। सच्चा आत्मिक सुख वही है जो पराश्रित न हो। जो सुख विषयों के द्वारा उत्पन्न होता है, इन्द्रियों के द्वारा भोगा जाता है, वह पराश्रित है। उसका शीघ्र ही विनाश हो जाता है, संयोग-अवस्था में जितना सुख मिलता है उससे अनेक गुना दुःख वियोग की अवस्था में मिलता है। ऐसे सुख से दूर रहना ही श्रेयस्कर है। सच्चा सुख आत्मज्ञान एवं आत्मध्यान के द्वारा प्रादुर्भूत होता है। आत्मध्यान तभी भलीभांति हो सकता है जब सब प्रकार के परिग्रह का सांसारिक पदार्थों के प्रति रहे हुए ममत्व का सर्वथा त्याग कर दिया जाता है। सच्ची सुख की अभिलाषा होने पर जो दुःखप्रद पाप कार्य करते हैं, आरम्भ-परिग्रह में आसक्त रहते हैं उन्हें सच्चा सुख कदापि नहीं मिल सकता। जो बबूल बोयेगा उसे आम कैसे मिलेंगे? वह तो कांटे ही पा सकेगा। इसी प्रकार जो पापों का उपार्जन करेगा, आरम्भ-समारम्भ में लगेगा वह दुःख का ही भागी होगा। चतुर पुरुष वही है जो अपने मनोरथ को पूर्ण करने वाले उपायों का अनुसरण करता है। अतएव प्रत्येक सुखाभिलाषी को आरम्भ-परिग्रह का त्यागकर आत्मध्यान करना चाहिए। (क्रमशः)

उपन्यास (2)

# छाया

*युवाचार्य श्री मधुकर मुनि जी म.सा.*

**पूर्ववृत्तः**- पर्वतों के मध्य बसा पुरिमताल का शासक शूरसेन प्रजावत्सल राजा था। पुरिमताल नगर में दो बालसखा श्रेष्ठी जिनदत्त और मन्मन रहते थे। वे दोनों ही अरबपति और निःसन्तान थे। मन्मन अनुदार, काइयाँ धूर्त और चालाक था। इसके विपरीत जिनदत्त उदार, धर्मप्रमी, दयालु, परोपकारी और दृढ़व्रती श्रावक था। अब आगे........

श्रेष्ठिवर जिनदत्त की प्रिया भानुमती थी। मानवी के शरीर में भानुमती अप्सरा-सी थी। रूप-गुण का उसमें मणि-कांचन संयोग था। वह सरस्वती-सी बुद्धिमती, मधुर स्वभाव वाली और आर्य बाला के समस्त गुणों से मण्डित थी। सदा पति के अनुकूल रहती थी। उस जैसी पतिव्रता सन्नारी को पाकर जिनदत्त धन्य था और स्वदार संतोषव्रत के पालक, जिनदत्त जैसे पति को पाकर भानुमती सेठानी भी सार्थक सौभाग्यवती थी। दोनों में अनन्य प्रीति और परस्पर पूर्ण विश्वास था। घर में यही प्राणी थे। इनका विवाह हुए वर्षों हो गये थे और नित-नूतन बनी रहने वाली प्रीति के कारण लगता था, जैसे विवाह हुए कुछ ही दिन बीते हैं। जिनदत्त के कनक-भवन में अनेकों दास थे। दासियाँ थीं। भानुमती के मधुर स्वभाव ने इन सबका हृदय भी जीत लिया था। वह कभी अपने सेवकों को डाँटती-फटकारती नहीं थी। जिनदत्त और भानुमती सरल स्वभावी थे। उनके पड़ौसी अपने को धन्य मानते थे कि हमें ऐसे भले दम्पती का पड़ौस मिला। पड़ौस के महत्त्व को बताने वाली यह बात जग जाहिर है कि दुष्ट रावण के पड़ौस में रहने के कारण ही तो सागर को राम के द्वारा बन्धना पड़ा था। इसीलिए लोग विधाता से दुष्ट पड़ौस की अपेक्षा नरक का वास माँगते हुए कहते हैं कि 'दुष्ट संग नहि देहि विधाता। बरु भल नाथ नरक कर वासा।'

भले के लिए बुरे भी भले हो जाते हैं, भले तो भले होते ही हैं। यदि

जिनदत्त-भानुमती अपने पड़ौसियों के लिए भले थे तो उनके सभी पड़ौसी भी इनके लिए भले थे। इनमें एक वृद्धा तो जिनदत्त को अपना पुत्र और भानुमती को अपनी पुत्रवधू ही मानती थी। इस वृद्धा के अपना कोई नहीं था, और उसका अपनत्व अभाव जिनदत्त-भानुमती ने पूरा कर दिया था।

जिनदत्त-भानुमती में पुण्य सहयोग से धार्मिक ऐक्य भी था। दोनों साधु-दर्शन करते। नियमित धर्म-क्रियाएं करते। वे सभी प्रकार से सुखी थे। कनक पत्तरों से जड़े कपाटों वाला जिनदत्त का कनकभवन सात मन्जिल का था। कुछ कक्ष और दीवारें महोदधि (अरबसागर) की बड़ी-बड़ी सीपियों से बनी थीं। रजत-सुवर्ण मण्डित कक्षों के अतिरिक्त मणिमय प्रांगण, रत्नजटित भित्तियों वाला जिनदत्त का भवन राजभवन की बराबरी करता था। संसार का कोई भी भौतिक सुख ऐसा न था, जो इस श्रेष्ठि-दम्पती को प्राप्त न हो। दोनों का धर्ममय जीवन बड़े सुख से बीत रहा था।

नित-नूतन बनी रहने वाली प्रीति के कारण यदि श्रेष्ठि-दम्पती को ऐसा लगता था कि हमारे विवाह को कुछ ही दिन हुए हैं तो कभी-कभी दोनों आपस में इस तरह की बातें भी करते-सोचते कि हमारे विवाह को वर्षों हो गए। ऐसा सोचकर भानुमती तो कभी-कभी बहुत खिन्न हो जाती थी। अपनी गोद सूनी देखकर ही भानुमती सोचती थी कि हमारे विवाह को वर्षों हो गये और घर में अभी तक अन्धेरा है। यह अन्धेरा कब तक रहेगा, कुलदीपक के बिना तो रत्नजटित भवन में भी अन्धेरा रहता है। एक दिन जब वह बहुत खिन्न-विमन हुई तो श्रेष्ठी जिनदत्त ने समझाया-

"प्रिये! किसी के जीवन में सर्वांश अनुकूलता दैव कभी नहीं रहने देता। भाग्य में होगा तो पुत्र कभी तो होगा और यदि हमारे हाथों में दैव ने पुत्र की रेखा नहीं खींची है तो यो उदास- विमन होने से भी नहीं होगा।"

"प्रिये! ऐसे भी तो जगत् में जन हैं, जिनके घर में बालक हैं, पर वे अपनी तोतली वाणी द्वारा माता-पिता को मुदित नहीं करते, बल्कि क्षुधा-पीड़ित वे बालक दूध के लिये रोते हुए अपने माता-पिता के मन में विषाद भर देते हैं। सभी अनुकूलताएँ किसी को नहीं मिलतीं। किसी के बच्चे हैं तो उनके पास खाने-पहनने को नहीं और जिनके अपार धन है, उनके घर कुलदीपक

नहीं। मेरे बालसखा अरबस्वामी श्रेष्ठी मन्मन को देख लो। वह भी निस्संतान है, उसका विवाह तो मुझसे एक वर्ष पहले हुआ था।''

भानुमती ने जिनदत्त की धैर्य दिलाने वाली बातें बड़े ध्यान से सुनी और वह संयत हुई। फिर कुछ सोचकर बोली- ''स्वामिन्! धनहीन माता-पिताओं के अर्द्धनग्न रहने वाले और दूध के लिए रोने वाले बच्चे भी अपने जनक का नाम तो चलाते ही हैं। वंश-भास्कर के बिना वंश तो डूब जाता है। इसके लिए यदि हमारे पुत्र न हो तो क्या हमारा जीवन जलरहित बादल, सुवासहीन पुष्प और वारि बिन जलाशय की तरह व्यर्थ नहीं है?''

धैर्यनिपुण जिनदत्त ने अपनी प्रिया भानुमती का दक्षिण कर अपने हाथ में लिया और उसकी मुद्रिका शोभित अँगुली पर हाथ फेरता हुआ वह बोला- ''प्रिये! यह भी लोक का भ्रम ही है कि पुत्र से पिता का नाम चलता है। नाम तो अपने कर्मों से चलता है। हमारे कुछ तीर्थंकरों के तो कोई भी पुत्र नहीं था। फिर भी वे अपने नाम से अमर हैं और आत्मरूप में तो परमात्मा होकर अमर हो ही गए हैं।''

''प्रिये! किसी को पता नहीं होता कि पुत्र कैसा होगा? कुपुत्र तो अपने पिता के नाम को डुबोता ही है। पुत्र होने पर भी नाम डूबता है और पुत्र न होने पर भी लोकाकर्षक कार्यों से नाम चलता है। अतः नाम और वंशवृद्धि की बातों का विचार कर अपना मन दुःखी मत करो।''

इन बातों से भानुमती आश्वस्त हो गई। दुःख का आवेग आँधी के झोंके की तरह यदि झकझोरता है तो शीघ्र ही अपने प्रभाव से जगत् को शून्य करके चला भी जाता है। भानुमती का दुःखावेग भी शान्त हो गया। निश्चित और दीर्घ अभाव को सहने की शक्ति भी आत्म-देव ही देता है। भानुमती भी भूल गई पुत्र के अभाव को। फिर तो जीवन का एक ढर्रा बन जाता है। जिस अभाव को सहने की आदत पड़ जाती है, उसकी याद क्या रोज-रोज आती है? नहीं आती। जिनदत्त और भानुमती को भी नहीं आती थी। जीवन के अन्य सभी सुख तो उन्हें भाग्य ने दिये ही थे। इन सुखों को भोगते हुए जिनदत्त-भानुमती धर्म का स्मरण करते हुए सुख से जी रहे थे। **(क्रमशः)**

नारी-स्तम्भ

# तनावमुक्ति का उपाय : परिश्रम

*डॉ. दिलीप धींग*

मेरी माताजी उमरावदेवी धींग (बाईजी) भारतीय महिलाओं के आदर्शों की प्रतिमूर्ति हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन संघर्षों की रोचक दास्तान है। पर उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी। संघर्षों के सुदीर्घ काल को हँसी-खुशी में व्यतीत करना सचमुच प्रेरक और उदाहरणीय है। जब कठिनाइयाँ आती हैं तो कई चीजें उनके साथ आती हैं। नहीं चाहते हुए भी उनके साथ चिन्ताएँ और तनाव भी आते हैं।

चिन्ता किसी भी समस्या का समाधान नहीं है; अपितु वह स्वयं एक समस्या है। बाईजी ने चिन्ताओं को देखा, परखा और उन्हें मैनेज किया। उन्होंने चिन्ता को कभी हावी नहीं होने दिया। इसके लिए उनका प्रमुख सूत्र रहा- परिश्रम, निरन्तर परिश्रम और निष्ठा के साथ परिश्रम। श्रम और जीवन को उन्होंने एकमेक कर दिया।

जीवन के समीकरण ऐसे बने कि पिता स्व. कन्हैयालाल जी धींग (बाउसा) के व्यावसायिक उतार चढ़ाव में आमदनी के स्रोत न्यून हो गये थे। ऐसे में बाईजी ने मोर्चा संभाला। तत्कालीन ग्रामीण परिवेश में उन्होंने परिवार के आर्थिक आधार को मजबूत करने के दो माध्यम बनाए - गाय-भैंस और सिलाई मशीन। गाय-भैंस के माध्यम से घर में दूध, दही, छाछ और शुद्ध घी की उपलब्धता रहने लगी। परिवारजनों को शुद्ध, सात्त्विक और पौष्टिक आहार मिलने लगा। दूध-घी पर खर्च होने वाला पैसा बचने लगा। साथ ही कुछ दूध की बिक्री से दो पैसे की आय भी होने लगी। अतिरिक्त छाछ को मुफ्त वितरित किया जाता था। इससे आत्म-संतुष्टि मिलती थी और हमारा सामाजिक भाव पुष्ट होता था।

इसके साथ ही बाईजी सिलाई भी करने लगी। इस बीच बाउसा शहर जाकर ऐसे कपड़े लाते थे, जिनकी महिला ग्राहकी अधिक होती है। बाईजी उन कपड़ों को भी बेचती। बाईजी की दिनचर्या पूरी तरह से व्यस्त रहती थी। देर रात तक बाईजी हाथ की मशीन से सिलाई करती। मशीन चलाते-चलाते बाईजी के हाथ थक जाते तो इन पंक्तियों का लेखक मशीन का हत्था घुमाता था। देर रात सोने

वाली बाईजी सुबह जल्दी उठ जातीं। प्रत्येक सुबह नियमित रूप से सामायिक करने के बाद छाछ फेरना, घट्टी चलाना, गाय-भैंस दुहना, पानी भरना आदि कार्यों से फिर दिनचर्या शुरू हो जाती। इस दिनचर्या में पाँच बच्चों की देखभाल, सासू माँ की सेवा, आगन्तुकों का आतिथ्य सत्कार और यथासंभव संतों के दर्शन व प्रवचन श्रवण आदि भी सम्मिलित रहते।

इन सब कार्यों के लिए बाईजी को कितना समय और श्रम लगाना पड़ता था; आधुनिक गृहिणियों के लिए यह अनुमान कठिन व अचरजभरा हो सकता है। चिन्ता और तनाव के लिए भी तो समय चाहिये। अब आप ही बताइये कि उनके पास चिन्ता करने और तनावों को पाले रखने के लिए समय ही कहाँ था।

तनाव-मुक्ति का सशक्त उपाय है - परिश्रम, व्यस्तता अथवा कार्य। इससे व्यक्ति तनाव-मुक्ति के साथ-साथ जीवन में बहुत सारी श्रेष्ठताएँ भी अर्जित करता है। सम्मान, स्वाभिमान, स्वास्थ्य, कुशलता, समृद्धि आदि परिश्रम के सुफल हैं।

बाईजी ने प्रतिष्ठा अर्जित की और उत्तम संस्कारों के माध्यम से परिवार को उच्च प्रतिष्ठा दिलाई। उन्होंने अभावों से वन होते जीवन में खुशियों का उपवन लगाया। श्रम-बिन्दु से सींचे गये उपवन को देख सबको आत्मसंतोष है। मेहनत का फल हमेशा मीठा होता है। आज भी बाईजी को मेहनत अच्छी लगती है। वरिष्ठ नागरिक की उम्र और गठिया से पीड़ित होने के बावजूद वे निरन्तर श्रम और साधना करती हैं।

*-53-बी, डोरे नगर, उदयपुर-313002*

## आवश्यक-सूचना

- जिनवाणी के जिन आजीवन सदस्यों का निधन हो गया है उनकी सूचना मंडल कार्यालय को शीघ्र भिजवाने की कृपा करावें तथा उनके स्थान पर नये आजीवन सदस्य बनाने हेतु शुल्क भिजवाने की कृपा करावें।
- जिनवाणी के नये बनने वाले सदस्य महानुभावों से निवेदन है कि अपने पते के साथ फोन नं. मय एस.टी.डी. कोड इस कार्यालय को भिजवाने की कृपा करावें।

-मन्त्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्वास्थ्य-विज्ञान

# स्वास्थ्यरक्षक व्यायाम 'स्वायसो'

*डॉ. चंचलमल चोरड़िया*

**स्वायसो क्या है?**

स्वायसो एक अत्यन्त सरल एवं अल्प समय में किया जा सकने वाला व्यायाम है। स्वायसो का प्रारम्भ चीन में कुछ दशक पूर्व ही हुआ। इसको बच्चे, युवक, महिलाएँ एवं वृद्ध सभी कर सकते हैं। इसमें किसी प्रशिक्षक की भी आवश्यकता नहीं होती है। बहुत साधारण होते हुए भी सैंकड़ों बीमारियों में यह अत्यधिक प्रभावशाली है। **चीन एवं जापान में हजारों लोग इसके द्वारा असाध्य रोगों से मुक्ति पा रहे हैं। इसी कारण यह पद्धति चीन, जापान, हांगकांग, दक्षिण-पूर्व एशिया, अमेरिका, कनाडा, भारत आदि राष्ट्रों में दिनोंदिन लोकप्रिय होती जा रही है।**

स्वायसो व्यायाम हमारे शरीर में एकत्र हुए अवरोध, तनाव व ऐंठन को समाप्त कर देता है जिससे रोगों से बचना संभव होता है तथा रोग से मुक्ति मिलती है। **इसके प्रणेता एवं प्रचारक मासाओ हयाशिमा ने चन्द वर्षों पूर्व जानबूझकर अपने शरीर में कैन्सर रोग उत्पन्न किया तथा स्वायसो कसरत द्वारा उसे ठीक कर दिया। स्वायसो व्यायाम तेओईस्ट के सिद्धान्तों पर आधारित है। उनके अनुसार पश्चिमी दवाइयों के 170 सालों और चीनी दवाइयों के 1000 सालों से ज्यादा इतिहास में ऐसी कोई खबर नहीं है कि उन्होंने किसी पागल को ठीक किया हो।**

**स्वायसो कैसे करें?**

स्वाय शब्द का चीनी अर्थ होता है **झूलना या दूर फेंकना। इस प्रकार स्वायसो का अर्थ होता है बांहों को आगे व पीछे झुलाना। स्वायसो द्वारा शरीर के विकारों को बाहर झटक दिया जाता है।** ये विकार ही शरीर में ब्लोक्स व तनाव के कारण होते हैं। **इसका प्राथमिक उद्देश्य शरीर की विकृत ऊर्जा को बाहर निकालकर शरीर में शुद्ध ऊर्जा का संचार करना है। इस प्रकार यह व्यायाम शरीर में प्राकृतिक स्थिति पैदा कर देता है। यह चीन में प्रचलित**

सर्वाधिक लोकप्रिय व्यायाम है जो अनेक रोगों में रामबाण सिद्ध हुआ है।

**स्वायसो व्यायाम कैसे करें?**

1. सर्वप्रथम पैरों को सीधा रखते हुए जमीन पर तनकर खड़े हो जाएं। बाँहों को धरती के समानान्तर फैलाएं एवं अंगुलियों को इस प्रकार रखें जैसे कि जमीन को पकड़ रखा हो।
2. दोनों बाँहों को एक साथ आगे व पीछे झुलाएँ। बाँहों को पीछे की ओर धकेलते समय ही शक्ति का प्रयोग करें व आगे उन्हें स्वयमेव आने दें। कुहनियाँ सीधी रखें, हथेलियाँ पीछे की ओर मुड़ी हुई हो। आँखें ठीक सामने की तरफ देख रही हो। मस्तिष्क को बिल्कुल खाली छोड़ दें व तसल्ली से गिनती करते जाएं।
3. पहली बार स्वायसो व्यायाम दो सौ अथवा तीन सौ से प्रारम्भ करें व धीरे-धीरे संख्या बढ़ाते जाएं। अन्ततः अपनी क्षमता के अनुसार एक हजार या दो हजार तक पहुँचें।

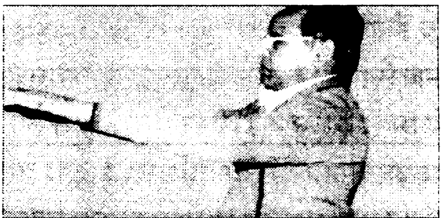

स्वायसो व्यायाम का प्रदर्शन करते हुए।

**सिद्धान्त-**

**ऊपर भरा व निचला खाली को ऊपर खाली व निचला भरा में बदलना**

मानव शरीर के महत्त्वपूर्ण अंग शरीर के ऊपरी आधे भाग में होते हैं, जैसे मस्तिष्क, हृदय, फैंफड़े आदि। निचले आधे भाग में सिर्फ कूल्हे व टांगें होती हैं। आज की तनावयुक्त जीवन शैली एवं अन्य कारणों के परिणामस्वरूप ऊपरी भाग को अत्यधिक कार्यरत रहना पड़ता है तथा हम अपनी अधिकांश शक्ति एवं ध्यान इसी ऊपरी भाग पर लगाते हैं। इस प्रकार हमारा शरीर सदैव ऊपर से भरा व निचला खाली जैसी अवस्था में रहता है। जैसे अगर हम सात आठ घंटे लगातार पढ़ते रहेंगे तो सिर भारी हो जाएगा, आँखें लाल हो जाएंगी और आगे पढ़ते रहना मुश्किल हो जाएगा। इस अवस्था को हम सिर का असाधारण रूप से भर जाना कह सकते हैं। ऐसी स्थिति में हम थक जाते हैं तथा कोई भी रोग लग सकता है।

ऊपर भरा से तात्पर्य न केवल सिर से है, बल्कि पूरे ऊपरी आधे शरीर से है। जब ऊपर भरा व निचला खाली होता है तो थकावट बढ़ती जाती है और विभिन्न रोग लग जाते हैं, क्योंकि विकृत ऊर्जा भी शरीर में बढ़ती जाती है।

'स्वायसो' व्यायाम का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य यही होता है कि यह ऊपर-भरा व निचला खाली वाली अवस्था को उलट देती है **इसके द्वारा विकृत ऊर्जा बाहर निकल जाती है, शुद्ध ऊर्जा का संचरण होता है तथा शरीर के निचले अंगों में बने हुए अवरोध व तनाव बिखर जाते हैं। स्वायसो द्वारा जो 70 प्रतिशत ऊर्जा निचले भाग में एकत्र हो जाती है उसे ऊपरी भाग में भेजना है तथा सिर्फ 30 प्रतिशत ऊर्जा ही निचले अंगों में रखनी है।**

**स्वायसो करते समय ध्यान रखने हेतु आवश्यक मार्गदर्शन :-**

1. अपनी कमर सीधी रखें। शरीर के ऊपरी भाग को पूर्णतः शिथिल हो जाने दें। कन्धों में तनाव नहीं लाएँ तथा बाँहों को घड़ी के पेण्डुलम की तरह झूलने दें।
2. शरीर के निचले भाग में गुरुत्वाकर्षण महसूस करें। तलवे पर मजबूती से खड़े रहें एवं पैरों में जूता-चप्पल नहीं पहनें। धरती को पकड़ने का प्रयास करें एवं अंगुलियों से जमीन की खुदाई करने का प्रयास करें। एडियों को जमीन पर इस प्रकार रखें जैसे कि वे भारी पत्थर हों।
3. ऐसा सोंचे कि आपका सिर किसी रस्से द्वारा लटक रहा है एवं सारा शरीर ढ़ीला होकर झूल रहा है, इस प्रकार से कंधों का शिथिलीकरण हो जाएगा।
4. जबड़ों को ढीला छोड़ दें, मुँह बन्द रखें, परन्तु दाँतों को नहीं भींचें।
5. मस्तिष्क को निश्चेष्ट रखें एवं अपने विचारों को भटकने नहीं दें। अपने शरीर के ऊपरी भाग को पूर्णतः खाली हो जाने दें।
6. पहिए की धुरी की तरह अपने नाभि-प्रदेश को व्यायाम के लिए केन्द्र बिन्दु मानें।
7. कुहनियों को कंधे से अधिक ऊँचाई तक नहीं झुलाएँ।
8. अपनी बांहें ढ़ीली रखे। अपनी बांहों को नाव के दो चप्पू समझें एवं इस प्रकार झुलाएं जैसे हवा को धकेल रहे हों।
9. अपना ध्यान नाभि के केन्द्र बिन्दु पर स्थिर करें। जांघों के भीतरी ह़िस्से को तनाव मुक्त रखें। गुदा को सिकोड़ने का प्रयास करें।
10. जब आप बाँहें झुला रहे हों तो हथेलियों को नीचे की ओर रखें।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर स्वायसो करेंगे तो नीचे-सात, ऊपर-तीन की अवस्था प्राप्त हो जाएगी अर्थात् पहले जो ऊपरी हिस्से में सात हिस्से भार था वह निचले हिस्से में उतर जाएगा एवं ऊपरी हिस्सा हल्का हो जाएगा तथा इसी अनुपात में शक्तिशाली बनता जाएगा। **स्वायसो करते समय कल्पना करें कि आप एक पुराने वृक्ष हैं, जिसकी जड़ें जमीन में काफी गहरी पैठी हुई हैं। ऐसा करने से हमारे तलवे में जो मेरेडियन्स की ऊर्जा है वह जागृत होकर ऊपर की ओर बढ़ने लगेगी तथा मांसपेशियों, त्वचा, हड्डियों व जोड़ों को शक्ति मिलने लगेगी।**

हालांकि स्वायसो बाहों को झुलाने की कसरत है, परन्तु इसमें पैरों का अधिक योगदान होता है व नाभि प्रदेश का महत्त्व होता है। स्वायसो में पैर व नाभि प्रदेश का कार्य बाँहों की अपेक्षा अधिक जरूरी है। नाभि प्रदेश से बाँहें ऊपर उठेंगी तथा नाभि प्रदेश का अवलम्बन पैर होंगे। इसी प्रकार **स्वायसो में पैर पर जोर देने को कहा जाता है, इसका कारण यह है कि हमारे तलवे में जो किडनी, लीवर एवं हृदय आदि के एक्यूप्रेशर के जो प्रतिवेदन बिन्दु हैं, वे दब जाते हैं एवं जागृत हो जाते हैं।**

**स्वायसो के परिणाम-**

उच्च तथा निम्न रक्तचाप भी केवल स्वायसो करते रहने से मिट जाता है। हमारे शरीर में असंख्य धमनियाँ व शिराएँ हैं जिनमें रक्त प्रवाह होता रहता है। कई शिराएँ तो इतनी सूक्ष्म होती हैं कि इनकी मोटाई सुई की नोंक के तीन सौ वे भाग के बराबर होती है। चूँकि रक्त का घनत्व पानी की अपेक्षा अधिक होता है। अतः जब हम किसी अंग से काम नहीं लेते या कम काम लेते हैं तो वहाँ रक्त जमने व थक्के बनने की प्रबल संभावना होती है और यही रक्तचाप का कारण बन जाता है। स्वायसो द्वारा हाथ पैर गतिमान बने रहते हैं एवं रक्तचाप सही बना रहता है।

जब स्वायसो नियमित रूप से किया जाएगा तो शरीर में कुछ परिवर्तन होने लगेंगे। पसीने एवं तापक्रम में वृद्धि होगी। श्लेष्मा बढ़ेगी तथा तन्द्रा छाने लगेगी। ये लक्षण स्पष्ट करते हैं कि शरीर से अशुद्ध ऊर्जा बाहर निकल रही है और शरीर मजबूत बनता जा रहा है, बीमारियाँ दूर हो रही हैं।

स्वायसो में जब हम अपनी बाँहों को चलाते हैं तो कमर, छाती व पेट की पेशियों में खिंचाव आता है, नाड़ी संचार सही हो जाता है और मेरेडियन में ऊर्जा का

प्रवाह सही हो जाता है।

**मासाओ हवाशिमा ने स्वायसो से निम्नलिखित रोगों को ठीक करने में संतोषजनक परिणाम प्राप्त किए हैं** – (1) विभिन्न प्रकार के कैंसर, (2) उच्च एवं निम्न रक्तचाप, (3) हृदय रोग, (4) गुर्दे के रोग, (5) आंखों के रोग (6) पाचन संबंधी रोग, (7) लीवर के रोग, (8) गठिया एवं (9) स्नायुरोग।

स्वायसो पद्धति अपनाकर पागलपन एवं मंद बुद्धि वालों के उपचार में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

*-चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)*

## जीना मुझे न आया

*श्री नगेन्द्र जैन "हैप्पी"*

हर किसी के जीवन में आती हैं कठिनाइयाँ
हर दिन होती हैं कुछ न कुछ परेशानियाँ
इन परेशानियों व कठिनाइयों में जीना जिसने सीख लिया
वही चमकता है इस दुनियाँ में जैसे अन्धेरे में दीया
जिसने विपरीत परिस्थितियों में भी सकारात्मक चिन्तन किया
कितने ही हों शूल आस-पास आँखों में अहसास फूल सा किया
समझ लो इस संसार में उसने जीना सीख लिया लेकिन,
ज़िन्दगी भर जिसने सिवा भोग के कुछ न किया
जो हर क्षण नकारात्मक झरनों में नहाया
फिर भी देखा दर्प है कितना, यहाँ मैंने क्या नहीं पाया
ऐसे बेमानों पर पड़ता है जब मौत का साया
तब जाकर उनको सारा माजरा समझ में आया
मेरे जैसा बोझ क्यों? इस पावन धरा पर आया
क्यों नहीं करमों ने मुझ विलासी को अब तक उठाया?
हर पल-हर क्षण मैंने तो अपने आपको खोया
इस जिंदगी में कोरी कल्पनाओं के अलावा कुछ न बोया

*-747, मिश्रराजाजी का रास्ता, इन्दिरा बाजार, जयपुर-302001 (राज.)*

बाल-स्तम्भ

# क्षुल्लक कुमार को प्रतिबोध

**बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 5 फरवरी 2009 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-250 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-200 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 150 रुपये तथा 100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।**

---

साकेत नगर के राजा का नाम पुंडरीक था। वह स्वभाव से विलासी था। उसकी कामातुर नज़र अपने छोटे भाई की पत्नी पर पड़ी। वह उससे अपनी पत्नी बनने के लिए विनति करने लगा, किन्तु उसकी बात भ्रातृपत्नी यशोभद्रा ने नहीं मानी। राजा ने उपाय सोचा एवं अपने छोटे भाई की हत्या करवा दी। यशोभद्रा को प्रतीति हो गई कि वह यहाँ सलामत नहीं है। विषयांध जेठ क्रोध में पागल होकर कुछ भी कर दे, इसका भरोसा नहीं है। अतः एक रात्रि में वह वहाँ से भाग निकली।

उस समय यशोभद्रा गर्भवती थी और विधवा थी। एक ओर तो स्वयं के शील का रक्षण और दूसरी तरफ पेट में रहे हुए बालक का रक्षण और संवर्द्धन। खूब सोच-विचार करने के बाद उसने दीक्षा ले ली। दीक्षा के बाद पेट की वृद्धि से अन्य सतियों को भी उसके गर्भवती होने की जानकारी हो गई। उसने अपनी आप बीती सुनाई और कहा कि शील-रक्षा रूपी शुभ हेतु से मैंने दीक्षा ली है। गुरुणी ने उसे करुणा भरी नज़र से देखा और विश्वास पात्र श्राविकाओं के पास प्रसूति करवायी। उन्होंने बालक को संभाल लिया और उसका नाम रखा- क्षुल्लककुमार।

क्षुल्लक जब आठ वर्ष का हुआ तो साध्वी यशोभद्रा ने उसे दीक्षित करा दिया। गुरु के पास बालमुनि क्षुल्लक विद्याभ्यास करते-करते बड़े हो गए। परन्तु

युवावस्था में पहुँचते-पहुँचते मुनि का वैराग्य रंग उतर गया। उसमें काम-वासनाएं जगने लगीं। एक दिन उसने अपनी माता से मन की बात कही। माता ने प्रेम से कहा- "वत्स! ये तेरे मन की कायरता है, तू मन को दृढ कर। तप और ध्यान से मन को सतत रोक। इसके बाद भी संयम पालने की तेरी इच्छा न हो तो मेरी बात मान तू बारह वर्ष संयम में रह और श्री वीतराग भगवन्त की वाणी का श्रवण कर।"

क्षुल्लक मुनि ने माता का मन और मान रखा। बारह वर्ष बाद भी वासना की वृत्ति निर्मूल न हुई तो माता से आज्ञा मांगी। माता ने कहा- "अपने गुरुदेव की आज्ञा लेकर जो करना है वह कर।"

गुरुदेव ने क्षुल्लकमुनि को समझाया, किन्तु जब वह नहीं समझा तो उससे कहा- "अपनी माता के समान मेरे कहने से भी बारह वर्ष संयम में रह और धर्म ध्यान कर।"

क्षुल्लक ने उनका मान रखा। दूसरे बारह वर्ष भी वहीं रहा, किन्तु फिर भी उसकी वृत्ति में जरा भी अन्तर नहीं आया। उसके बाद क्षुल्लक मुनि उपाध्याय के पास और आचार्य के पास बारह-बारह वर्ष तक रहे। इस प्रकार कुल 60 वर्ष तक उसने संयम की साधना की। उसके बावजूद भी उसके हृदय में सुलगती काम-वृत्ति उपशमित नहीं हुई। इसलिए उसने दीक्षा छोड़ दी। उस समय माता ने गृहस्थावस्था में लाई गई रत्नकंबल और राजमुद्रा क्षुल्लक को प्रदान कराई और उसे पूर्व का इतिहास कहा।

क्षुल्लक रत्नकंबल और राजमुद्रा लेकर साकेतपुर की राजसभा में पहुँचा, तो उस समय एक नर्तकी अपने कलात्मक नृत्य से सभा का मनोरंजन कर रही थी। क्षुल्लक उसे अपलक देखता रहा।

नर्तकी बहुत समय से नृत्य कर रही थी इसलिए वह थक गई। उसकी आँखों में थकान देखकर नर्तकी की माता ने गीत में कहा-

*सुट्ठु गाइअं, सुट्ठु वाइअं, सुट्ठु नच्चिअं, सामसुंदरी अणुपालियं दीहराइयं सुमिणंते मा पमायए।*

हे सुंदरी! तूने बहुत सुन्दर गीत गाया, वाद्य भी सुन्दर बजाया, नृत्य भी अत्युत्तम किया, बहुत रात बीत गई, अब थोड़े समय के लिए प्रमाद मत कर। थोड़े समय के लिए बिगाड़ा मत कर। माताजी की प्रेरणा मिलते ही नर्तकी सावधान हो गई। उसकी आँखों में चमक आ गई। थकावट भूल गई और चपलता से नृत्य करने

लगी।

क्षुल्लक ने इस गाथा को सुना तो बेहद प्रसन्न हुआ। गाथा के अंतिम चरण ने उसके हृदय को स्पर्श किया। उसके चित्त में वह चरण बार-बार गूंज रहा था। इस प्रेरणा से झूम कर उसने नर्तकी पर रत्नकंबल न्यौच्छावर कर दिया। इसको देखकर राजपुत्र ने मणिजड़ित कुंडल भेंट किया। मंत्री ने मुद्रा रत्न दिया। एक स्त्री ने स्वयं का हार दिया। राजा के महावत ने अंकुशरत्न दिया। यह देखकर राजा ने क्षुल्लक से आश्चर्यपूर्वक पूछा- "तुमने मेरे से पहले नर्तकी को ईनाम कैसे दिया।"

क्षुल्लक ने कहा- "हे राजन्! मैं आपके छोटा भाई का पुत्र हूँ। साठ वर्ष तक मैंने संयम की आराधना की, परन्तु विषयवासना से विह्वल होकर मैंने दीक्षा छोड़ दी और अपनी वृत्तियों को पोषण देने हेतु मैं आपके पास राज्य मांगने आया था, परन्तु नर्तकी की माता की गाथा सुनकर मेरा मोह उतर गया। कामवृत्ति के सारे बादल बिखर गये। मैंने साठ वर्ष संयम की आराधना की और अब मेरे जीवन के कितने वर्ष बाकी हैं। अब शेष वर्षों में किसके लिए पाप कार्य करूँ। नर्तकी की माता ने मेरी आँख खोल दी, इसलिए मैंने रत्नकंबल न्यौच्छावर कर दिया। यह कहकर क्षुल्लक ने पुंडरीक को राजमुद्रा बतायी।

इस रोमांचक घटना को सुनकर पुंडरीक बोल उठा- "हे क्षुल्लक! तू मुझे क्षमा कर। मैं भी कामवृत्ति में अपना आज भूल बैठा। तूने मेरा अंधापन दूर कर दिया। ले यह राज्य, इसे सहर्ष स्वीकार कर।"

"राजन्! अब मुझे राज्य की क़ामना नहीं है। जो राज्य मुझे मिलना चाहिए, अब वह राज्य मुझे मिल गया। आत्मराज्य से विशेष और महान् दूसरा कोई राज्य नहीं है। अब तो मैं उस पर शासन करूँगा" - क्षुल्लक ने शांति से कहा।

इसके बाद राजपुत्र ने अपनी बात कही- "हे पिताश्री! राज्य के लोभ से मैंने आपकी हत्या करने की सारी तैयारी कर ली थी। इस गाथा को सुनकर मुझे लगा कि पिताजी कितने वर्ष जीने वाले हैं। वे वृद्ध हो गए हैं, इसलिए थोड़े वर्षों के लिए तू उनकी हत्या करके पितृघातक न बन।"

मंत्री बोला- "हे स्वामिन्! मैं आपके शत्रु के पक्ष में मिल गया था। इस गाथा को सुनकर मन को बोध हुआ- हे जीव! तुझे अब दस पन्द्रह से अधिक वर्ष जीना नहीं। इतने वर्ष तक तूने राजा की निष्ठापूर्वक सेवा की तो थोड़े वर्षों के लिए दगा क्यों करता है।"

स्त्री ने कहा- "मेरे पति विदेश गये हुए हैं, बारह-बारह वर्षों से उनकी राह देखते हुए थक गई। मेरा यौवन मुझे वापस नहीं मिलेगा। इस विचार से मैंने पर-पुरुष सेवन का विचार किया। इस गाथा को सुनकर मैंने सोचा कि इतने वर्ष निकाल दिए। अब थोड़े के लिए क्यों अपना चारित्र बिगाडूँ।"

महावत ने स्वीकार किया- "शत्रु की बात में आकर आज मैं तुमको हाथी से गिराकर मारता, किन्तु यह गाथा सुनकर मेरा मन बदल गया।"

सभी की बात सुनकर सभी आश्चर्यचकित एवं प्रसन्न हुए। संसार की क्षणिकता को जानकर सभी ने दीक्षा ग्रहण कर ली।

*('उपदेश प्रासाद' भाग 4 से संकलित)*

**प्रश्न :-**

1. राजा पुंडरीक की भ्रातृपत्नी का क्या नाम था और उसने दीक्षा क्यों ली?
2. अपने मन के वशीभूत होना कायरता है। क्यों?
3. संधि-विच्छेद कीजिये- विद्याभ्यास, गृहस्थावस्था, अत्युत्तम।
4. अभिप्राय बताइये- सलामत, विलासी, प्रसूति, गर्भवती, विह्वल, राजमुद्रा, पुंडरीक, विधवा, अपलक।
5. समासविग्रह कीजिये- विषयान्ध, अकुंशरत्न, भ्रातृपत्नी, रत्नकंबल, पितृघातक, परपुरुष, आत्मराज्य, कामातुर।

---

## बाल-स्तम्भ [नवम्बर-2008] का परिणाम

**जिनवाणी के नवम्बर-2008 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'सनत्कुमार' कहानी के प्रश्नों के उत्तर कई बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक 25 में से दिये गये हैं-**

| पुरस्कार एवं राशि | नाम | अंक |
|---|---|---|
| प्रथम पुरस्कार-250/- | सौरभ भंडारी-पीपाड़शहर | 22 |
| द्वितीय पुरस्कार-200/- | मीनाक्षी छाजेड़-समदड़ी | 21.50 |
| तृतीय पुरस्कार-150/- | मयूरी गोदड़-बेलगांव | 19 |
| सान्त्वना पुरस्कार-100/- | विपुलकुमार पीतलिया-मैसूर | 18 |
| | दीप्ति जैन-कोटा | 17.50 |
| | कानन जैन-जोधपुर | 17.50 |
| | महावीर प्रसाद जैन-कुण्डेरा | 17 |
| | भारती जैन-करौली | 15.50 |

# संवाद (19)

माह अक्टूबर-2008 की जिनवाणी में पूछे गये निम्नांकित प्रश्न के कतिपय उत्तर नवम्बर एवं दिसम्बर माह की जिनवाणी में प्रकाशित हुए हैं, उसी क्रम में आगे उत्तर यहाँ प्रकाशित हैं-

**प्रश्न- क्या जैन धर्म ईश्वर (God) को स्वीकार नहीं करता है? यदि वह ईश्वर को स्वीकार नहीं करता है तो 'भगवान्', 'परमपिता', 'परमात्मा' 'प्रभु' 'नाथ' आदि शब्दों का प्रयोग क्यों किया जाता है? मेरी सीमित समझ में हम सब आत्माओं से ऊपर एक परम-आत्मा है, जो निराकार, ज्योतिर्मय एवं बिन्दुस्वरूप है और वही आत्मा समय-समय पर आकर इस संसार को बोध देती रहती है। क्या यह सही नहीं है?**

*- मोतीचन्द नवलखा, मुम्बई*

**चन्द्रप्रकाश गाँधी, अजमेर-** जैन धर्म में ईश्वर, भगवान्, प्रभु, नाथ आदि अरिहंतों एवं सिद्धों को ही कहा गया है। हम सबसे ऊपर एक परम-आत्मा है, जो निराकार ज्योतिर्मय एवं बिन्दु स्वरूप है और वही आत्मा समय-समय पर आकर इस संसार को बोध देती रहती है, यह कथन सही नहीं है।

जैन धर्म कर्म-प्रधान है। तदनुसार आत्मा को कर्म से ही गति, आगति की प्राप्ति होती है। देव यानी अरिहंत चार घनघाती कर्मों ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय का क्षय कर चुके होते हैं। अरिहंत सशरीर होने से तीर्थ की स्थापना करते हैं, उपदेश देते हैं और धर्म से गिरते हुये साधक को स्थिर करते हैं, जबकि सिद्ध भगवान् आठ कर्मों को क्षय करके सिद्ध हो गये हैं और वे सुखरूप सिद्धालय में निराकार,ज्योतिर्मय विराजमान हैं। सिद्ध भगवान् अशरीरी होने से संसार को बोध/उपदेश आदि की प्रवृत्ति नहीं करते हैं। इन देवों की आराधना से कर्मों की निर्जरा होती है। इन देवों के गुणों को समझने से, श्रद्धा रखने से एवं पालन करने से आत्मा मोक्षगामी बनती है।

एक आत्मा अरिहंत बनने के पश्चात् संसार को बोध देती है। वही आत्मा शेष रहे कर्मों का क्षय करके सिद्ध बनती है। वह आत्मा पुनः जन्म नहीं लेती हैं। (जैसे- जिन तिलों से तेल निकल गया वे तिल पुनः तेलयुक्त नहीं हो सकते हैं), लेकिन दूसरी नई आत्मा अरिहंत बनकर संसार को बोध देती है।

वर्तमान में महाविदेह क्षेत्र में ही अरिहंत देव विराजमान हैं।

**श्रीमती पुष्पा मेहता, पीपाड़ सिटी**– जैन धर्म सृष्टिकर्ता ईश्वर को स्वीकार नहीं करता। आत्मा का शुद्ध स्वरूप परमात्मा कहलाता है। परमात्मा के सम्बन्ध में जैन धर्म की अपनी एक निश्चित परिभाषा है। जो राग-द्वेष से सर्वथा मुक्त हो, जन्म-मरण से रहित हो, केवलज्ञान और केवल दर्शन को प्राप्त कर चुका हो, उसके न शरीर हो, न इन्द्रिय हो न कर्म हो, न कर्म फल हो, उसके पास संसार का कोई भी काम अवशेष न हो। वही अजर, अमर, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, निरंजन, निराकार आत्मा परमात्मा है। जैन धर्म इस वीतराग परमात्मा को मानता है तथा जैन धर्म प्रत्येक आत्मा में परमात्मा पद प्राप्त करने की सत्ता को देखता है। साधना करने वाला साधक उपासना के द्वारा परमात्मा बन सकता है। आत्मा और परमात्मा में मात्र अन्तर इतना ही है कि आत्मा कर्मसहित है और परमात्मा कर्म-रहित है।

**श्री उमरावमल बाफना, जोधपुर**– जैन धर्म ईश्वर को जगत्-कर्त्ता के रूप में स्वीकार नहीं करता। यदि ईश्वर कर्ता होता तो आदमी उच्च-निम्न, अमीर-गरीब, बीमार, लम्बा, बौना, गोरा-काला, वक्र नहीं होता। जीव अपने कर्म से ही सुख-दुःख आधि-व्याधि भोगता है। ईश्वर न तो दुःखी को सुखी कर सकता है और न ही सुखी को दुःखी कर सकता है। सब कर्माधीन हैं। गुणियों का गुणगान करने से कर्म-निर्जरा होती है, यह जैन धर्म का सिद्धान्त है। इस भावना से व्यक्ति गुणियों के लिए भगवान्, प्रभु आदि शब्द का प्रयोग करता है। अपनी आत्मा ही परमात्मा है इसका कोई मालिक नहीं है। आत्मा का स्वभाव स्वतंत्र है। स्वतंत्र का कोई मालिक नहीं होता। परतंत्र तो अपने कर्म से होता है इसलिये वह दास, पुत्र-पुत्री, पत्नी आदि रूप में जन्म लेता है। आत्मा ही कर्ता आत्मा ही भोक्ता है। यह जैन धर्म का मूल सिद्धान्त है। सिद्ध से बढ़कर कोई नहीं होता। हर आत्मा में सिद्ध बनने की शक्ति विद्यमान है, फिर बोध देने की बात कहाँ से आयी?

सिद्धां जैसो जीव है, जीव सोई सिद्ध होय।
कर्म मैल का आंतरा बूझे बिरला कोई।।

यही जैन सिद्धान्त है।

**नया प्रश्न**– जिनवाणी दिसम्बर 2008 में पूछे गए प्रश्नों के कतिपय उत्तर प्राप्त हुए हैं। अन्य उत्तरदाता भी प्रार्थित हैं कि वे शीघ्र अपना चिन्तन प्रेषित करें। ■

# आओ स्वाध्याय करें - 20

# अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्

## द्वारा प्रायोजित त्रैमासिक प्रतियोगिता (20)

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के माध्यम से 'आओ स्वाध्याय करें' त्रैमासिक प्रतियोगिता-परीक्षा (20) का आयोजन 'जिनवाणी' के अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर 2008 के अंकों के आधार पर किया जा रहा है। इसमें कुल 50 प्रश्न पूछे गए हैं, जिनके उत्तर **श्री गौतम जैन (पचाला वाले), उपाध्यक्ष-अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्, 5, पंचवटी, कटर मशीन की गली में, न्यू मंडी रोड, आलनपुर-322021, सवाईमाधोपुर (राज.) फोनं. 9460441351** के पते पर 5 फरवरी, 2008 तक मिल जाने चाहिए। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को क्रमशः 1001 रुपये, 501 रुपये एवं 251 रुपये के पुरस्कार से पुरस्कृत किया जाएगा। 100 रुपये के 10 प्रोत्साहन पुरस्कार भी दिए जायेंगे। ये सभी पुरस्कार 15 से 45 वर्ष के युवा श्रेणि के उत्तरदाताओं को भी अलग से दिए जायेंगे। इस प्रकार पुरस्कारों की संख्या 26 हो गई है। युवाश्रेणि हेतु प्रत्येक प्रतियोगी अपने नाम एवं पते के साथ उम्र का भी उल्लेख करे। जो प्रतियोगी अपने प्राप्तांक शीघ्र जानना चाहते हों, वे प्रविष्टि के साथ जवाबी पोस्टकार्ड भेजकर परिणाम जान सकते हैं। सभी उत्तरदाताओं से निवेदन है कि वे उत्तर भेजते समय केवल प्रश्न क्रमांक व उत्तर ही भेजें। प्रश्न/पृष्ठ संख्या लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है।-सम्पादक

---

### (क) मुझे पहचानो-

01. मैं ज्ञान का आलोक पर्व हूँ।
02. मैंने अपने जीवन में कभी दुःख या समस्या का संत्रास नहीं देखा।
03. मैं दुनिया की सबसे बड़ी समस्या हूँ।
04. मैं मरण का दुःख देने वाला, शरण रहित एवं अत्यन्त गंभीर हूँ।
05. निरन्तर जन्म-मरण के इस वेग में बहते संसारी जीवों के लिए मैं शरणभूत हूँ।
06. मेरा निर्माण करना विज्ञान के लिए भी असंभव है।
07. हम अल्पकाल तक ही स्थिर रहते हैं और बहुत काल तक हमारा दुष्परिणाम भुगतना पड़ता है।
08. कार्य सिद्धि तो मेरे से होती है।
09. दूसरे का दोष पाकर मुझे असीम आह्लाद होता है।
10. मैं धर्म, पंथ, जाति इत्यादि से परे हूँ।

## (ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए-

11.कर्म बंध के हेतुभूत हिंसादि द्वारों का निरोध किससे होता है ?
12.औदारिक शरीर के निर्माण में कर्म के संवादी तत्त्व कौन हैं?
13.जिनदत्त व मन्मन किस नगर में परिगणनीय श्रेष्ठी थे?
14.'न्याय कुसुमांजलि' के रचनाकार कौन?
15.साधारण कागज पर असाधारण बातें किसमें छपती हैं?
16.विकृत मन को स्थिर करने में क्या सहायक होता है?
17.राजा प्रदेशी किस मत का समर्थक था?
18.परिवार हो या समाज अथवा संघ, सबका मूल आधार क्या है?
19.द्रव्य, क्षेत्र, काल के वातावरण में कौन नहीं बदलते हैं?
20.बौद्ध पिटकों में पंच स्कन्ध का प्रतिपादन कैसा कहा गया है?

## (ग) अंकों में उत्तर दीजिए-

21.स्तोत्र साहित्य में तीर्थंकरों के लिए कितने विशेषणों का उल्लेख जिनवाणी में हुआ है?
22.स्थानांग सूत्र में आयुघात के कितने कारण दिये हैं?
23.संसार में मंत्र तो अनेक हैं पर महामंत्र कितने हैं?
24.भ. महावीर का तीर्थ भरतक्षेत्र में कितने हजार वर्ष तक प्रवर्तमान रहने वाला है?
25.कितने द्रव्य अनंत होते हैं?
26.मनुष्य की कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या कितनी होती है?
27.गर्भस्थ बालिका ने गर्भ में न मारे जाने हेतु माता के समक्ष कितने आदर्श प्रस्तुत किये हैं?
28.व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होने के प्रमुख रूप से कितने कारण हैं?
29.सामायिक में कितने प्रकार के पापों से विरत रहने का संकल्प किया जाता है?
30.बड़ी साधु वंदना में कितने पद्य हैं?

## (घ) रिक्त स्थान भरिए-

31.इस..........को देख प्राज्ञ! संशय मन में ना होता क्या?
32.जैन धर्म..........वादी है।
33.समस्त कर्मों का संपूर्ण अभाव हुए बिना आत्मा की.........नहीं हो सकती।
34.युवापीढी जिसे स्वतंत्रता एवं खुलापन समझ रही है, वास्तव में वह....... है।
35......होना ही स्वयं की रक्षा करने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है।

## (ङ) कहाँ वर्णित है?

36. शत्रुंजय तीर्थ की उत्पत्ति कथा।

37. क्रोधी मनुष्य को सर्प की उपमा दी गई है।
38. मान का प्रतिपक्षी गुण विनय है।
39. लोभ को सब विनाशों का आधार सब व्यसनों का राजमार्ग कहा गया है।
40. अगर तुम्हारे पास दो गायें हैं तो एक अपने पड़ौसी को दे दो।

## (च) हाँ/ना में उत्तर दीजिये।

41. तीनों लोकों में कल्याण करने के कारण आदिनाथ प्रभु शंकर है।
42. चरित्रवान कभी भी सामने वाले की गलती नहीं निकालता।
43. अहिंसा, संयम व तप ये धर्म के तीन भेद हैं।
44. दुःखी होना वेदनीय कर्म का परिणाम है।
45. संसारी जीव एक क्षण भी पुद्गलानाश्रित नहीं रह सकते।
46. शृंगार के लिए कपड़े पहनना पाप है।
47. कर्ता होते हुए भी अभिमान हो तभी साधना में सफल हो सकते हैं।
48. सेवक वैभव संपन्न होता है तथा स्वार्थी अभावयुक्त होता है।
49. दुर्जन की दुर्जनता से ज्यादा खतरनाक सज्जन की सक्रियता है।
50. भक्ति का रस अमृत से भी मीठा होता है।

## हस्ती के पट्टधर हीरा

*श्री मगनचन्द जैन*

मेरी नैया लगादे पार हस्ती के पट्टधर हीरा।।टेर।।
मैं इधर-उधर ही भटका, पर मिटा न मन का खटका।
अब आया हूँ तेरे द्वार हस्ती के पट्टधर हीरा।। मेरी....
मैंने धर्म-कर्म नहीं कीन्हा, नव तत्त्वों को नहीं चीन्हा।
झेली कष्टों की कटुमार हस्ती के पट्टधर हीरा।। मेरी....
मैंने आर्त्त रौद्र ही ध्याया, विकथाओं में रस पाया।
मैंने बाँधे कर्म अपार हस्ती के पट्टधर हीरा।। मेरी......
मैंने स्वाध्याय नहीं कीन्हा, सामायिक चित्त नहीं दीन्हा।
छाया मन में घोर अंधेर हस्ती के पट्टधर हीरा।। मेरी....
मैंने भोगों में रस पाया, चौरासी भ्रमण कर आया।
अब भव से कर दो पार हस्ती के पट्टधर हीरा।। मेरी.....
मेरे भाव बने वन्दन के, गुरुवर की चरण शरण के।
'मगन' करले वन्दन इस बार हस्ती के पट्टधर हीरा।।
मेरी नैया लगादे पार हस्ती के पट्टधर हीरा।।टेर।।

*-सेवानिवृत्त अध्यापक, फाजिलाबाद (हिण्डौन)*

स्वाध्यायी परिचय

# वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री नेमीचन्द जी कर्नावट

ओजस्वी वक्ता, मधुर गायक, अच्छे प्रशासक, आदर्श शिक्षक, स्वाध्यायप्रिय, अनुशासन प्रिय, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्रीमान् नेमीचन्द सा कर्नावट का जन्म श्रीमान् पुखराज जी कर्नावट की धर्मपत्नी श्रीमती पानी देवी की रत्न कुक्षि से दिनांक 14.11.1951 को भोपालगढ़ में हुआ।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़ में हुई तथा उच्च शिक्षा जोधपुर में तथा स्वयंपाठी विद्यार्थी के रूप में सम्पन्न हुई। आपने एम.कॉम. की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करके एम.एड. का प्रशिक्षण लिया। वर्तमान में आप राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय 'अरटिया कला' में प्रधानाचार्य के रूप में शिक्षा क्षेत्र में अपनी सेवाएं दे रहे हैं।

प्रारम्भ से ही आपका परिवार रत्नसंघ के संत-सतियों के प्रति पूर्ण समर्पित रहा है, इसी के फलस्वरूप प्रातः स्मरणीय अखण्ड बाल ब्रह्मचारी 1008 आचार्य श्री हस्ती की प्रेरणा से सन् 1966 में आप स्वाध्यायी बने, तब से पर्वाधिराज पर्युषण में आप निरन्तर अपनी सेवाओं द्वारा जिनवाणी की प्रभावना कर रहे हैं। सन् 2002 में आपने हाँगकाँग में पर्युषण पर्वाराधना द्वारा लोगों में धर्म की जागरणा की।

**सूत्र ज्ञान :-** आपने उत्तराध्ययन सूत्र तथा दशवैकालिक सूत्र के कुछ अध्ययन कण्ठस्थ किये तथा अन्तगडदशांग सूत्र, उपासकदशांग सूत्र, राजप्रश्नीय सूत्र आदि कतिपय सूत्रों का वाचन किया।

**थोकड़ों का ज्ञान :-** आपने पच्चीस बोल, सम्यक्त्व के 67 बोल, लघुदण्डक, गुणस्थान द्वार, पाँच देवों का थोकड़ा, 98 बोल का बासठिया आदि छोटे-बड़े कई थोकड़े कण्ठस्थ किये हैं।

**भजन-चौबीसी :-** आपको लगभग 120 भजन, विंनयचन्द चौबीसी, सूर्यभानु की चौबीसी आदि कई चौबीसियाँ, भक्तामर स्तोत्र आदि कण्ठस्थ हैं। पाथर्डी बोर्ड से आप विशारद परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हैं।

आप समय-समय पर संघ द्वारा आयोजित शिविरों के संचालन एवं अध्ययन-अध्यापन के कार्य में कुशलतापूर्वक महती भूमिका का निर्वहन करते हैं। आप प्रतिदिन दो सामायिक, एक-दो घण्टा नियमित स्वाध्याय एवं चिन्तन-मनन करके समय का सदुपयोग करते हैं।

आप प्रतिदिन नवकारसी तथा रात्रि में तिविहार प्रत्याख्यान करते हैं। सामान्यतः रात्रि भोजन का त्याग, सामूहिक भोजन में रात्रि भोजन का त्याग, प्रतिदिन प्रतिक्रमण, ध्यान, कायोत्सर्ग, नवीन ज्ञानार्जन करते हुए अपनी दिनचर्या व्यतीत करते हैं।

गत दो वर्षों से ग्रीष्मकालीन अवकाश में भोपालगढ़ में आयोजित संस्कार निर्माण शिविर का संचालन आप बखूबी कर रहे हैं।

**लेखन कार्य :-** सामायिक, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, संस्कार निर्माण, विकृति निवारण से सम्बद्ध आपके कतिपय लेख जिनवाणी में प्रकाशित हुए हैं।

संघ की किसी प्रकार की गतिविधि चाहे शिविर में अध्यापन कार्य हो या संचालन, पर्युषण सेवा हो अथवा प्रचार-प्रसार, आप पूर्ण रूप से उस कार्य में यथा योग्य अपना सहयोग देने हेतु तत्पर रहते हैं।

प्रधानाचार्य के पद पर रहते हुए आपकी सराहनीय विशिष्ट सेवाओं के लिए जिलाधीश जोधपुर द्वारा आपको सम्मानित किया गया।

**पयुर्षण सेवाएँ :-** आपने अब तक इगतपुरी, कोसाणा, सिंधनूर, गोविन्दगढ़, उटकमण्ड, मेड़ता सिटी, जालोर, दासणं, आसोप, बाड़मेर, बून्दी, भोपालगढ़, बिलाड़ा, खण्डप, हाँगकाँग, आगोलाई, नांगलराया, सहाड़ा, मानसरोवर(जयपुर), लखनऊ आदि क्षेत्रों में पर्युषण सेवाएँ प्रदान कर जिनवाणी की महती प्रभावना की है। श्री स्थानक वासी जैन स्वाध्याय संघ के सभी सदस्यगण आपके उज्ज्वल भविष्य और दीर्घायु के लिए जिनेश्वर देव से मंगल कामना करते हैं।

*-मोहनकौर जैन, सचिव-स्वाध्याय संघ, जोधपुर*

## आवश्यक सूचना

**जनवरी 2009 से 'जिनवाणी' पत्रिका का वितरण भारतीय डाक विभाग द्वारा प्रत्येक माह की 10 तारीख को प्रारम्भ कर दिया गया है, अतः जिनवाणी में प्रकाशनार्थ प्राप्त उन्हीं सूचनाओं एवं समाचारों को सम्मिलित किया जा सकेगा जो हमें पूर्वमाह की 25 तारीख तक प्राप्त हो जायेंगे-सम्पादक**

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

# नूतन साहित्य

**डॉ. धर्मचन्द जैन**

) ***कर्म कहानी किसने जानी*** (Karma Kahaani Kisane Jaani)–महासती डॉ. हेमप्रभा जी 'हिमांशु', ***प्रकाशक*** - मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन, पीपलिया बाजार, ब्यावर-305901 (राज.), ***पृष्ठ*** 12+77+77, ***मूल्य***- 50 रुपये ***संस्करण***- सन् 2008

जैन कर्म-सिद्धान्त को प्रेरक कथाओं के माध्यम से जनसाधारण तक पहुँचाने का कार्य 'कर्म कहानी किसने जानी' पुस्तक में महासती डॉ. हेमप्रभा जी 'हिमांशु' ने कुशलतापूर्वक किया है। ज्ञानावरणादि आठों कर्मों के प्रचलित स्वरूप का प्रतिपादन करने के साथ कर्मों का बंध कैसे होता है तथा उससे कैसे बचा जा सकता है, इसका सशक्त संदेश इस पुस्तक में संप्राप्त होता है। पुस्तक में बांयी ओर हिन्दी भाषा है तथा दायें पृष्ठ पर अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद है। अतः पुस्तक दोनों भाषाओं के पाठकों के लिए उपयोगी है। पुस्तक में 9 अध्याय हैं। प्रथम अध्याय कर्म-खेल में कर्म का सामान्य विवेचन कथाओं के माध्यम से हुआ है। शेष आठ अध्यायों में आठ कर्मों के स्वरूप, प्रभाव, बंध कारण, फल का निरूपण यथाप्रसंग कथाओं के साथ अनुस्यूत है। पुस्तक के अंग्रेजी भाग का सम्पादन श्री आर.आर.भण्डारी ने किया है।

***कत्लखाने : 100 तथ्य***- डॉ. नेमीचन्द जैन, ***प्रकाशक***- (1) करुणा अन्तरराष्ट्रीय, 70, Sembudoss Street, Chennai-600001, 044-25231714 (2) प्राकृत भारती अकादमी, 13-ए, मेन मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.), फोन-0141-2524827 ***पृष्ठ***-36, ***मूल्य***-30रुपये, ***नवम संस्करण*** -सितम्बर 2008

कत्लखाने मानवीय संवेदनाओं के सूख जाने के प्रमाण हैं। पशुओं में भी मनुष्य की तरह सुख-दुःख की वेदना होती है, वे भी हमारी भांति जीना चाहते हैं। आगम की इस गूँज का सर्वत्र प्रचार कर कत्लखानों की बढ़ती संख्या को रोकना

चाहिए। दूसरी ओर पशु भारतीय अर्थ-व्यवस्था के आधार हैं। वे जीकर जितना देते हैं, उसका अनुभव उन्हें मौत के घाट उतारने वालों को नहीं है। देवनार, ईदगाह तथा इन्दौर के कत्लखानों के रंगीन चित्र एवं कत्लखानों के 100 तथ्य देकर 'तीर्थंकर' के सम्पादक डॉ. नेमीचन्द जैन(अब दिवंगत) ने मनुष्य की संवेदनाओं को जाग्रत करने का प्रयास किया है तथा विभिन्न तथ्यों पर यह स्थापित किया है कि पशुओं का कत्ल भारत के अर्थतन्त्र का कत्ल है। सन् 1996 तक इस पुस्तक के आठ संस्करण प्रकाशित हो चुके थे। प्राकृत भारती एवं करुणा इण्टरनेशनल ने यह नवम संस्करण प्रकाशित कर अपनी जागरूकता का परिचय दिया है।

## समझौता

*साध्वी युगल निधि-कृपा*

परिवार के बुजुर्ग सदस्यों के साथ तालमेल बिठाकर जीना अनिवार्य है। उनके साथ सामंजस्य बिठाने के लिए एक बात को खयाल में रखना जरूरी है कि जो बुजुर्ग होते हैं उनका अतीत लंबा होता है और भविष्य छोटा होता है, अतः उन्हें स्वयं को बदलना बड़ा मुश्किल है। उनकी तुलना में जिनका अतीत छोटा है और भविष्य लंबा है उन्हें स्वयं को बदलना आसान है और बुजुर्गों के साथ समझौता करना भी आसान है। जिस प्रकार किसी यात्री को ट्रेन में छत्तीस घंटों का सफर करना हो वह अपने साथ में बैठे हुए चार घंटे की यात्रा करने वाले यात्री को अपनी ओर से सुविधा भी देता है तथा उसकी ओर से होने वाली असुविधा को निभा भी लेता है। सिर्फ यह सोचकर कि थोड़ी-सी देर की बात है। यह गणित समझ में आ जाए तो बुजुर्गों के साथ भी समझौता करना आसान और सहज हो जाएगा। यदि हमारे साथ चलने वालों की गति धीमी हो और हमारी गति तेज हो तथा हमारे साथ चलने वालों को हम साथ ही रखना चाहते हों तो हमें स्वयं के कदमों को धीमा करना होगा। इसी तरह परिवार के जिन बुजुर्ग सदस्यों के साथ आप रहना चाहते हैं तो स्वयं को उदार तथा धैर्यवान बनाना होगा ताकि समझौता किया जा सके। जैसे सूर्य के उदय होने पर अंधकार नष्ट हो जाता है ऐसे ही सामंजस्य बिठाकर चलने से जीवन में सुख शांति बनी रहती है।

*-'सुमतिमाला' से साभार*

# समाचार-विविधा

## विचरण-विहार एवं विहार दिशाएँ : एक नजर में

### (1 जनवरी, 2009)

| | |
|---|---|
| परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 9 | : दिनांक 16 दिसम्बर को बोईसर से विहार कर वानगांव पधारे। वानगांव से सावटा, डहाणु, बोवड़ी होते हुए 1 जनवरी को उमरगांव पधारे। |
| परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 4 | : बालोतरा में कुछ दिन विराजने के पश्चात् उपनगरों में-नवकार नगर, बाडमेर कॉलोनी, शांतिनगर, श्रीश्रीमाल भवन में विराज कर महावीर नगर पधारे हैं। |
| साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा 6 | : महासती-मण्डल लक्ष्मीनगर से विहार कर शक्तिनगर पधारे। शक्तिनगर से दाधिच नगर पधारे हैं। |
| सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4 | : अजमेर के उपनगरों में धर्मप्रभावना कर रहे है। |
| व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 12 | : अमरावती में धर्मप्रभावना कर बडनेरा, मावली, धानुरागुरव, नांदधानगी आदि मध्यवर्ती क्षेत्रों को फरसते हुए मांगलादेवी पधारे। महासती श्री पुष्पलता जी म.सा. आदि ठाणा 5 अलग सिंघाड़े में विचरण कर रालेगांव की ओर विहार कर रहे हैं। |
| तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4 | : जयपुर के उपनगर- बारह गणगौर, महावीर भवन, श्यामनगर-सोडाला, |

| | |
|---|---|
| | नित्यानंद नगर, चित्रकूट नगर फरसते हुए 29 दिसम्बर को कोठारी फार्म हाउस पधारे। |
| विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5 | : सकारण बेलगाँव विराज कर धर्म की महती प्रभावना कर रहे हैं। |
| विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 | : हिण्डौन से फाजिलाबाद, डेहरा, झारड़ा, कंजोली, दुब्बी आदि मध्यवर्ती क्षेत्रों को फरसते हुए श्री महावीरजी पधारे। श्री महावीरजी से सेमाला होते हुए उदई पधारे हैं। यहाँ से गंगापुरसिटी विराजना संभावित है। |
| व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 11 | : जोधपुर के विभिन्न उपनगरों को तीन सिंघाड़ों में आगे-पीछे विहार से लाभान्वित कर पाली पधारे हैं। सुमेरपुर पधारने की संभावना है। |
| महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा 5 | : कुड़ी भगतासनी, मोगड़ा, कांकाणी, रोहिट, खारड़ा, घुमटी होते हुए पाली पधारे। सोजत रोड पधारने की संभावना है। |
| व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 7 | : 14 दिसम्बर को अशोकनगर, शूले बैंगलोर पधारे। अभी यहाँ विराजने की संभावना है। |
| व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 | : उमरगांव, भिलाड़, नरौली, सेलावास, वापी, बलसाड़, डोंगरी, चिखली, नवसारी होते हुए सूरत पधार गए हैं। |
| व्याख्यात्री महासती श्री इन्दिराप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 5 | : तासगांव में धर्म की महती प्रभावना कर रहे हैं। अभी यहीं विराजने की संभावना है। |

# आचार्यप्रवर का विहार सूरत की ओर

**परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. आदि ठाणा 9** का दो सिंघाड़ों में सूरत की ओर विहार चल रहा है। आचार्यप्रवर भायन्दर पूर्व एवं पश्चिम में विराजने के पश्चात् सब्जी मण्डी होते हुए 28 नवम्बर को नायगाँव पधारे। यहाँ से 29 नवम्बर को वसई रोड, 1 दिसम्बर को माणिक नगर-वसई स्टेशन, 2 दिसम्बर को नाला सोपारा होते हुए 5 दिसम्बर को विरार पधारे। विरार से परमात्मा पार्क, सीरगाँव, वेतरणा, सफाला, केलवा रोड होते हुए 11 दिसम्बर को पालघर पधारे। केलवा रोड से पालघर के मध्य लगभग 8 किलोमीटर का रेलवे ट्रेक पार किया। 14 दिसम्बर को बोइसर, 16 दिसम्बर को बानगाँव पधारे। यहाँ से 13 किलोमीटर का विहार कर 18 दिसम्बर को सांवटा पधारे। सांवटा से 20 दिसम्बर को गोपीपुरा डहाणु रोड (ईस्ट) होते हुए 22 दिसम्बर को गोपीपुरा में पटेल के मकान में विराजे तथा 23 दिसम्बर को डहाणु पधारे। यहाँ चार दिन धर्माराधना का शंखनाद कर 27 दिसम्बर को ईरानी रोड जैन उपासरा होते हुए 28 दिसम्बर को दस किलोमीटर का विहार कर होलवड़ एवं 29 दिसम्बर को बोरडी ग्राम पदार्पण हुआ। यहाँ से 1 जनवरी को आपका उमरगाँव पदार्पण संभावित है। 4 संत पहले ही उमरगांव पधार चुके हैं। मुम्बई से उमरगाँव पदार्पण के दौरान नवसारी संघ तीन बार आचार्यप्रवर की सेवा में शेखेकाल विराजने हेतु विनति लेकर उपस्थित हुआ। डहाणु में सूरत श्रीसंघ का शिष्ट-मण्डल 20 दिसम्बर को उपस्थित हुआ तथा फाल्गुनी पूर्णिमा एवं अक्षय तृतीया पर सूरत विराजने हेतु विनति प्रस्तुत की। अनेक भक्तजनों का निरन्तर आवागमन बना हुआ है।

# उपाध्याय प्रवर का बालोतरा से पचपदरा की ओर विहार संभावित

**परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 4** का सिंवाची पट्टी के प्रमुख नगर बालोतरा के नये स्थानक में 22 नवम्बर को पधारे। यहाँ श्रावक-श्राविकाओं ने बड़े उत्साह से धर्माराधन का लाभ लिया। इसलिए संत-मण्डल का यहाँ 25 दिन विराजना हुआ। जोधपुर चातुर्मास सम्पन्न कर श्रमण संघ के पंजाबी संत श्री श्रमणमुनि जी एवं विकसितमुनि जी ने नये स्थानक में 17 दिसम्बर को पधारकर उपाध्यायप्रवर एवं संत-वृन्द के दर्शनों का लाभ लिया एवं हर्ष का अनुभव किया। समदड़ी से

चातुर्मास सम्पन्न कर श्रमण संघ की साध्वीवृन्द डॉ. दर्शनप्रभा जी आदि सतियों ने भी उपाध्यायप्रवर के दर्शनों का लाभ लेकर आनन्द का अनुभव किया। उपाध्यायप्रवर जहाँ-जहाँ भी पधारे वहाँ इन साध्वीवृन्द ने तथा पूज्य श्री रामेशमुनि जी की आज्ञानुवर्तिनी साध्वीवृन्द ने दर्शनलाभ लिया। 18 दिसम्बर को उपाध्यायप्रवर संत-मण्डली के साथ नये स्थानक से विहार कर श्री सुमेरमल जी सालेचा परिवार के विशेष आग्रह एवं श्रीमती कौशल्या जी सालेचा की अनन्य भक्ति के कारण रूपनगर पधारे। यहाँ ब्यावर संघ ने आगामी चातुर्मास हेतु भावभीनी विनति प्रस्तुत की। इससे पूर्व अलीगढ़ रामपुरा संघ भी चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ था। 21 दिसम्बर को अशोककुमार जी जीरावला परिवार के यहाँ, 22 को मदनलाल जी रूपचन्द जी सालेचा के यहाँ नवकार नगर में विराजे। यहाँ दो दिन विराज कर 24 दिसम्बर को शांतिनगर में श्री प्रकाशचन्द जी श्रीश्रीमाल के यहाँ पधारे। 27 को श्री अशोक कुमार जी श्रीश्रीमाल के यहाँ एवं 28 दिसम्बर को महावीर नगर में श्री गौतमचन्द जी सुरंगीलाल जी किशोरकुमार जी सालेचा परिवार (भाईजी वाले) के यहाँ पदार्पण हुआ। कुछ दिन यहाँ विराजने की संभावना है। पौष शुक्ला चतुर्दशी पर पचपदरा पधारना संभावित है। बालोतरा में जयपुर, अजमेर, जोधपुर, पाली, पचपदरा, जसोल, सिवाना, बाड़मेर, रायचूर, दिल्ली, नागौर आदि नगरों के साथ पंजाब और हरियाणा से भी श्रीसंघ एवं भक्तजन दर्शन-लाभ एवं धर्मलाभ लेने उपस्थित हुए। विभिन्न स्थलों से विनतियाँ चल रही है।

## पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के जन्म-दिवस पर निबन्ध प्रतियोगिता

अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मंडल के तत्त्वावधान में चारित्र, चूड़ामणि, इतिहास मार्तण्ड परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा. का 99वाँ जन्म-दिवस पौष शुक्ला चतुर्दशी 10 जनवरी 2009 को विभिन्न धार्मिक कार्यक्रमों के रूप में मनाया जायेगा। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। निबन्ध का विषय **'ज्ञान-क्रिया के पर्याय सामायिक-स्वाध्याय'** है। इस प्रतियोगिता में सभी आयु वर्ग के बालक-बालिका, श्रावक-श्राविका भाग ले सकते हैं। निबन्ध पूर्णतया मौलिक तथा शास्त्र सम्मत हो। निबन्ध 500 शब्दों से अधिक का नहीं होना चाहिए। निबन्ध भेजने की अन्तिम तिथि 19 मार्च 2009 (आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का जन्म दिवस) रखी गयी है। प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार रुपये 1000/-, द्वितीय 500/- एवं तृतीय 251/-

दिये जायेंगे। निबन्ध भेजने का पता :- *डॉ. मंजुला बम्ब, 3 हेम-मंजुल, रामसिंह रोड, होटल मेरु पैलेस के पास, जयपुर- 302001 (राज.) फोन: 93142 92229*

# आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति धार्मिक एवं नैतिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर सवाईमाधोपुर में सम्पन्न

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत धार्मिक एवं नैतिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का आयोजन 26 से 30 दिसम्बर, 2008 को सवाईमाधोपुर में किया गया। इस शिविर में जोधपुर, भोपालगढ़, पीपाड़ जयपुर, अलवर, भरतपुर, आलनपुर, अलीगढ़, सवाईमाधोपुर, खेड़ली, नदबई, कुण्डेरा, जरखोदा, हिण्डौन, कोटा, गंगापुर सिटी, चोरू आदि स्थानों से 150 छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। योग्यता के आधार पर दस कक्षाओं में वर्गीकरण कर शिविरार्थियों को बोर्ड द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर अध्ययन करवाया गया। शिविर के अन्तिम दिवस पर सभी शिविरार्थियों की लिखित परीक्षा ली गई। वरीयता सूची में स्थान प्राप्त करने वाले शिविरार्थियों को सम्मानित किया गया। शिविर में प्रशिक्षक के रूप में श्री नेमीचन्द जी कर्णावट-भोपालगढ़, श्रीमती मोहनकौर जी जैन-जोधपुर, श्री लल्लूलाल जी जैन-सवाईमाधोपुर, श्री त्रिलोकचन्द जी जैन-सवाईमाधोपुर, श्री गौतमचन्द जी जैन-बजरिया, श्री धर्मेन्द्र जी जैन-सवाईमाधोपुर, श्री राकेशजी जैन-सुमेरगंजमण्डी, श्रीमती मोहनीदेवी जी जैन-आलनपुर, श्री प्रकाश जी सालेचा-जोधपुर की महनीय सेवाएँ रही। शिविर अवधि के दौरान विशिष्ट वक्ताओं को आमन्त्रित कर उनके ज्ञान, चिन्तन एवं अनुभवों से सभी शिविरार्थियों को लाभान्वित किया गया। प्रमुख वक्ता के रूप में श्रीमती सुषमा जी सिंघवी-जयपुर, प्रो. धर्मचन्द जी जैन-जोधपुर, श्री प्रेमचन्द जी जैन-जयपुर, श्री नेमीचन्द जी कर्णावट-भोपालगढ़ की महनीय सेवाएँ प्राप्त हुई। शिविर में संघाध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के मंत्री श्री प्रेमचन्द जी जैन, स्वाध्याय संघ की सचिव श्रीमती मोहनकौर जी जैन आदि महानुभावों का विशेष मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद प्राप्त हुआ। युवक परिषद् के अध्यक्ष श्री कुशल जी गोटेवाला-सवाईमाधोपुर, कार्याध्यक्ष श्री प्रमोदजी हीरावत-जयपुर, उपाध्यक्ष श्री गौतमचन्द जी जैन-बजरिया, महासचिव श्री महेन्द्र जी सुराणा-जोधपुर एवं प्रवीण जी कर्णावट-मुम्बई ने शिविर अवधि में उपस्थित रह कर प्रत्येक शिविरार्थी का साक्षात्कार लिया तथा व्यक्तिगत विचार-विमर्श के समय आवश्यक प्रेरणा एवं मार्गदर्शन प्रदान किया। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ सवाईमाधोपुर, श्री जैन रत्न

युवक परिषद् सवाईमाधोपुर, श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल सवाईमाधोपुर के सभी कार्यकर्त्ताओं ने उत्साह से आतिथ्य-सेवा का लाभ लिया। सभी शिविरार्थियों को नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं ग्रन्थ एवं बैग प्रदान किया गया। शिविर का दीक्षान्त समारोह संघाध्यक्ष महोदय श्री सुमेरसिंह जी बोथरा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पधारे सभी अतिथियों का युवक संघ अध्यक्ष श्री कुशल जी गोटेवालों ने हार्दिक स्वागत-अभिनन्दन किया। शिविर संचालक श्री सुन्दरलाल जी सालेचा ने शिविर की विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की एवं शिविर के दौरान आयोजित भाषण तथा भजन प्रतियोगिता में स्थान पाने वाले शिविरार्थियों को सम्मानित किया गया। संघाध्यक्ष महोदय के कर-कमलों से समारोह में विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति के चैक एवं पुरस्कार वितरित किए गए। सवाईमाधोपुर श्रीसंघ के अध्यक्ष श्री बद्रीलाल जी जैन ने पधारे हुए सभी महानुभावों का धन्यवाद ज्ञापित किया। सभी शिविरार्थियों की आवास एवं भोजन की सुन्दर व्यवस्था सवाईमाधोपुर संघ द्वारा की गई। *-महेन्द्र सुराणा, महासचिव*

## आचार्य रमेश के मुखारविन्द से 6 दीक्षाएँ

**हावड़ा (कोलकाता)-** आचार्य श्री रामेश के मुखारविन्द से गतमाह छ मुमुक्षुओं ने भागवती दीक्षा अंगीकार की। उल्लास भरे वातावरण में श्री हेमन्त लाभचन्द जी पोखरणा-बेगूँ, श्री पूनमचन्द जी बोथरा-पथारगांधी, श्री राहुल शांतिलाल जी संचेती, भानपुरी-बस्तर, कु. खुशबू प्रकाशचन्द जी बोहरा-खेतिया, कु. महक माणकलाल जी चोरडिया-जगदलपुर, कु. भावना गौतमचन्द जी बोहरा-अक्कलकुवा ने दीक्षा अंगीकार कर जीवन को धन्य किया।

## संयमसाधक श्री रामप्रसाद जी महाराज पर प्रकाशित ग्रन्थ पर खुली पुस्तक परीक्षा

**गोहाना(सोनीपत)-** संयम के उत्कृष्ट धनी, महाकाव्य प्रणेता श्री रामप्रसाद जी म.सा. पर प्रकाशित **'वर्तमान के वर्धमान : भगवन् श्री रामप्रसाद महाग्रन्थ'** पर खुली पुस्तक परीक्षा का आयोजन किया जा रहा है। इसमें भाग लेने हेतु प्रश्नोत्तर पुस्तिका एवं फार्म प्राप्त करने के लिए रजिस्ट्रेशन फीस 250 रु. तथा डाकखर्च 50 रु.नकद अथवा ड्राफ्ट द्वारा जमा करवाकर महाग्रन्थ को निःशुल्क प्राप्त किया जा सकता है। ड्राफ्ट 'आर्य वज्र स्वाध्याय संघ (रजि.)' के नाम से दिल्ली अथवा गोहाना में देय होना चाहिए। फार्म भरने की अंतिम तिथि 9 मई,2009 है तथा प्रश्नोत्तर पुस्तिका जमा करवाने की अंतिम तिथि 18 जुलाई 2009 रखी गई है। विजेताओं को

51,000/- रु. का प्रथम पुरस्कार, 31,000/-रु. का द्वितीय पुरस्कार, 21,000/- रु. का तृतीय पुरस्कार प्रदान किया जायेगा तथा सभी प्रतिभागियों को आकर्षक ईनाम दिया जाएगा। सम्पर्क सूत्रः- *सुश्री प्रतिभा जैन* **C/o T.P.S.** *पब्लिक स्कूल, रिढाणा रोड़, गोहाना (सोनीपत) हरियाणा, फोन : 01263-326302, 094162-33997 (मोबाइल)*

## जीवदया संगठनों द्वारा 620 पशुओं को अभयदान

**हैदराबाद-** करुणा क्लब, श्री जैन रत्न युवक परिषद्, भारती प्राणी मित्र संघ एवं विभिन्न जीवदया संगठनों के संयुक्त अभियान में 620 पशुओं को सुरक्षित बचाकर स्थानीय गोशालाओं को सुपुर्द किया गया। यह पशु गैर कानूनी तरीके से लॉरियों में सामान की भाँति ठसाठस भरकर ले जाये जा रहे थे। *-श्रीपाल देशलहरा, सिकन्द्राबाद*

# संक्षिप्त समाचार

**जयपुर-** अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल शाखा, जयपुर की ओर से दिनांक 10 दिसम्बर 2008 को जयपुर शाखा की अध्यक्ष श्रीमती उर्मिला जी बोथरा के नेतृत्व में 35 सदस्याओं ने वृद्धों एवं अनाथ बच्चों की सहायतार्थ कार्यक्रम रखा। शाखा की ओर से जयपुर के चौड़ा रास्ता में स्थित अनाथाश्रम में अनाथ बच्चों की सहायतार्थ घी, तेल आदि किराणे का सामान दिया गया। इसी के साथ जयपुर के उपनगर मानसरोवर में समाज कल्याण विभाग के विकलांग तथा वृद्धाश्रम में चारदीवारी बनाने हेतु राशि 5000/- की सहायता सहित मिठाई, फल व खाने-पीने का सामान दिया गया।

*- मीना गोलेछा, मंत्री*

**जयपुर-** राजस्थान विश्वविद्यालय में जन-संचार केन्द्र के अध्यक्ष एवं जिनवाणी के पूर्व सम्पादक डॉ. संजीव भानावत हाल ही में एक सप्ताह की चीन यात्रा पर गये थे। इस यात्रा के दौरान उन्होंने बीजिंग, शेनयांग तथा शंघाई शहरों के पत्रकारिता एवं जन-संचार के प्रमुख विश्वविद्यालयों एवं विभागों के वरिष्ठ प्रोफेसरों तथा विद्यार्थियों के साथ बातचीत की तथा शोध-अनुसंधान के क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग की संभावनाओं पर भी विचार-विमर्श किया।

**उदयपुर-** तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ के पावन जन्म-कल्याणक दिवस को अहिंसा दिवस के रूप में घोषित करने के उपलक्ष्य में साहित्यिक संस्था युगधारा तथा अहिंसा विचार मंच की ओर से अहिंसा काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें अहिंसा, शाकाहार और प्राणी रक्षा पर कविताएँ, गीत और विचार प्रस्तुत किये गये। इस गोष्ठी

का संयोजन डॉ. दिलीप धींग ने किया।

**हैदराबाद-** श्री महावीर स्वामी जैन श्वेताम्बर संघ-हैदराबाद के तत्त्वावधान में 31 अक्टूबर से 2 नवम्बर 2008 को त्रिदिवसीय राष्ट्रीय अहिंसा सम्मेलन आचार्य श्री राजयशसूरीश्वर जी के सान्निध्य में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में गो वंश संरक्षण, गो आधारित कृषि, पंचगव्य से उपचार, शाकाहार, पशु-क्रूरता आदि विषयों पर गहन चर्चा हुई। श्रीपाल देशलहरा के सहसंयोजकत्व में यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

**जयपुर-** श्री कन्हैयालाल हीरावत चैरिटेबल ट्रस्ट, जयपुर द्वारा जोगणिया माताजी, बेगूं में 28 वें निःशुल्क नेत्र एवं शल्य चिकित्सा शिविर का आयोजन दिनांक 16 जनवरी, 2009 से किया जा रहा है। इसमें चिकित्सा के साथ दवाइयाँ, भोजन, आवास की भी निःशुल्क सुविधा प्रदान की जाती है। रोगियों को देखने व भर्ती करने की तारीख 16 व 17 जनवरी 2009 है। सम्पर्क सूत्रः- *श्री पारसचन्द जी हीरावत, 1178, परतानियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर-302001 (राज.), 0141-2578469*

**लुधियाना-** संघ लोकसेवा आयोग द्वारा संचालित परीक्षाओं में सफलता हेतु आत्म इंस्टीट्यूट ऑफ एक्सैलेंस ने एक योजना बनायी है। इच्छुक विद्यार्थी परीक्षा तैयारी हेतु संस्था के संस्थापक श्री हीरालाल जैन से सम्पर्क कर सकते हैं। फोन नं. 0161-2492334, 9316415153

**लुधियाना-** महासती श्री प्रतिभा श्री जी 'प्राची' ने 'चतुर्विध जैन संघ में श्राविकाओं का योगदान' विषय पर जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय लाडनूँ से विद्वद्रत्न डॉ. सागरमल जी जैन के निर्देशन में पी-एच्.डी. की उपाधि प्राप्त की है। पंजाब प्रवर्तिनी महासती श्री केसरदेवी जी म.सा. की परम्परा में श्रमणी इतिहास लेखिका डॉ. विजयश्री जी म.सा. की शिष्या डॉ. प्रतिभाश्रीजी ने अपने 900 पृष्ठों के शोधप्रबन्ध में पुरातनकाल से वर्तमान काल तक की लगभग 9 हजार श्राविकाओं के योगदान की चर्चा की है।

# बधाई

## न्यायमूर्ति श्री के.के. तातेड़ का स्वागत

**मुम्बई-** श्री जैन सेवा संघ, मुम्बई के तत्त्वावधान में 7 दिसम्बर 2008 को रिक्रिएशन क्लब, अंधेरी में न्यायमूर्ति श्री कमलकिशोर जी तातेड़ का अभिनन्दन किया गया। समारोह की अध्यक्षता पूर्व न्यायाधिपति श्री राजन जोधराज जी कोचर ने की।

कार्यक्रम में इन्स्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट के उपाध्यक्ष श्री उत्तमप्रकाश जी अग्रवाल, शिक्षाविद् एवं श्री स्थानकवासी श्रमण संघ समिति के अध्यक्ष श्री सुमतिलाल जी कर्नावट, संस्था के अध्यक्ष श्री शांतिलाल जी कवाड़, कार्यक्रम प्रायोजक श्री प्रदीप जी राठौड़, महामंत्री श्री उगमराज जी लुणावत आदि गणमान्य महानुभावों ने भाग लिया। कार्यक्रम का संचालन श्री युवराज जी जैन ने किया।

## श्री बुद्धिप्रकाश जैन पोरवाल संघ के अध्यक्ष पद पर निर्वाचित

**सवाईमाधोपुर-** 28 दिसम्बर 08 को श्री पद्मावती पोरवाल जैन संघ (सवाईमाधोपुर

क्षेत्र) के चुनाव हुए जिसमें अध्यक्ष पद पर श्री बुद्धिप्रकाश जी जैन भारी मतों से विजयी हुए। अब तक होने वाले चुनावों में इतने अधिक मतों से विजयी होने वाले श्री बुद्धिप्रकाश जैन पहले व्यक्ति हैं। जयपुर, कोटा, इन्दौर से सैकड़ों की संख्या में मतदाता मतदान स्थल सवाईमाधोपुर पर पहुँच गये और एकजुट होकर पोरवाल जैन समाज की विभिन्न सामाजिक गतिविधियों में सदैव अपनी रचनात्मक व सृजनात्मक भूमिका निभाने वाले कर्मठ तथा जुझारू व्यक्तित्व के धनी श्री बुद्धिप्रकाश जी जैन को अपना मत व समर्थन देकर भारी मतों से विजयी बनाया। विजयी होने के बाद चुनाव अधिकारी श्री अभिनन्दन जैन ने उन्हें अध्यक्ष पद की शपथ दिलाई। इस अवसर पर श्री बुद्धिप्रकाश जैन ने कहा कि समाज में समरसता, युवा फोरम व महिला मंडल का गठन एवं छात्रावास का निर्माण उनकी प्रथम प्राथमिकता रहेगी। साथ ही युवा परिचय सम्मेलन, सामूहिक विवाह सम्मेलन भी कराये जायेंगे। जनसेवा के कार्यों में समय-समय पर रक्तदान शिविर एवं नेत्र व स्वास्थ्य जांच शिविरों का आयोजन भी कराया जायेगा।

**जयपुर-** लेफ्टिनेंट श्री दीपक जैन सुपौत्र श्री ज्ञानचन्द जैन(पुत्र श्री सुरेन्द्र कुमार जैन),

जयपुर राजस्थान को 13 दिसम्बर 08 को इण्डियन मिल्ट्री एकेडमी (IMA) देहरादून में भारत की राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल द्वारा लेफ्टिनेन्ट रैंक पर प्रतिष्ठापित एवं नियुक्त किया गया। इनका चयन TES के अन्तर्गत हुआ है, जिससे वे सिग्नल कोर में इंजीनियर व लेफ्टिनेंट के पद पर आसीन हैं।

**दुर्ग-** सुश्री तिरुमला कटारिया पुत्री श्री राजेश जी कटारिया ने छः वर्ष की लघुवय में श्रावक प्रतिक्रमण पूर्ण कण्ठस्थ कर लिया। जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी श्रावक संघ, दुर्ग ने साध्वी श्री जयमाला जी म.सा. के सान्निध्य में उसे सम्मानित एवं पुरस्कृत किया।

# श्रद्धाञ्जलि

**जयपुर-** समाजसेवी, सन्तसेवी, धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक, श्रीमान् सन्तोषचन्द

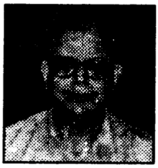

जी बम्ब सुपुत्र स्व. श्रीमान् सिरेहमल जी बम्ब का 60 वर्ष की वय में 16 दिसम्बर 2008 को स्वर्गवास हो गया। माता-पिता के द्वारा प्रदत्त धार्मिक संस्कार एवं गुरुसेवा का भाव आपके जीवन में अन्त तक बना रहा। देव, गुरु एवं धर्म के प्रति आप पूर्णतः समर्पित थे। आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. से आपने प्रतिदिन सामायिक, प्रत्येक चतुर्दशी को उपवास-पौषध एवं प्रत्येक पक्खी को प्रतिक्रमण, नवकारसी आदि अनेक व्रत-नियम लिए थे। जीवन के अन्तिम क्षणों में भी आप तप-त्याग के प्रति सजग रहे। आचार्यप्रवर हीरा एवं उपाध्यायप्रवर मान के प्रति एवं संत-सतीवृन्द के प्रति आपकी अटूट आस्था थी। आपकी भावना के अनुसार परिवारजनों द्वारा आपके दोनों नेत्रों का दान कर दो नेत्रहीनों को रोशनी प्रदान की गई। आप अपने पीछे धर्मपत्नी प्रमिला जी को छोड़कर गए हैं।

**जयपुर-** सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती सुमन जी नवलखा धर्मपत्नी सुश्रावक श्री अरुणकुमार जी नवलखा का 16 अप्रेल,2008 को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। वे धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्यपरायण, सेवाभावी श्राविका थीं।

**अजमेर-** सुश्राविका श्रीमती सुनिता जी पिछोलिया धर्मपत्नी सुश्रावक श्री रवि जी पिछोलिया का आकस्मिक स्वर्गवास दिनांक 3-11-2008 को हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण था। आप सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहती थी।

**सवाईमाधोपुर-** सरलमना श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् छीतरमल जी जैन सुपुत्र स्व.

श्रीमान् रामनिवास जी जैन (पुसेदा वाले) का 10 दिसम्बर 2008को स्वर्गवास हो गया। धर्मनिष्ठ, कर्तव्य परायणता, कर्मठ सेवाभावना, स्वधर्मि-वात्सल्यता आदि अनेक गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आप नियमित रूप से सामायिक स्वाध्याय करते थे साथ ही आपने चौथे व्रत का नियम ले रखा था। आपकी आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं संत-सतियों के प्रति पूर्ण श्रद्धा-भक्ति थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

**टुमकुर-** श्री बृज भूषण जी जैन (नरव्त) सुपुत्र स्व. श्री मदनगोपाल जैन (कैथल-अलवर) का समाधिपूर्वक मरण 4 नवम्बर 2008 को हो गया। उनकी भावन के अनुसार मृत्यूपरान्त नेत्रदान किये गए है।

**पाली-** सुश्रावक श्री कुन्दनमल जी सुराणा 'चिन्तन' का 31 अक्टूबर 08 को निधन

हो गया। वे एक जागरूक एवं चिन्तनशील श्रावक थे। आप संतों के व्याख्यान के पश्चात् प्रायः चार पंक्तियाँ प्रस्तुत कर अपनी उपस्थिति प्रकट करते थे। जिनवाणी के लिए भी आपकी सद्भावनाएँ प्राप्त होती रहती थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं। मरुधर केसरी मित्र मण्डल, पाली के सदस्यों ने आपके निधन पर भाव-भीनी श्रद्धांजलि अर्पित की है।

**विजयवाड़ा-** श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती नेमकंवर जी धर्मपत्नी सुश्रावक श्री मूलचन्द जी ओस्तवाल का 19 दिसम्बर 08 को स्वर्गवास हो गया। गुरु के प्रति भक्ति, संघ के प्रति निष्ठा और धर्म-साधना के प्रति उनकी सक्रियता प्रेरणादायी थी। सामायिक-स्वाध्याय और साधना-आराधना में जागरूक श्राविकारत्न का जीवन अनुकरणीय था। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा., उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. प्रभृति संत-सतीवृन्द के प्रति आस्थावान श्राविका अपने पीछे भरापूरा सस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं। संघ के अतिरिक्त महामंत्री श्री मानेन्द्र जी ओस्तवाल की आप चाची थीं।

**चेन्नई-** श्री राकेश कुमार जी बाघमार सुपुत्र स्व. श्री भंवरलाल जी बाघमार (कोसाणा निवासी) का 13 दिसम्बर 08 को 37 वर्ष की अल्पवय में असामयिक निधन हो गया। उनकी पूज्य आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं संत-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धाभक्ति थी। धर्मनिष्ठ एवं सेवाभावी श्रावकरत्न का सम्पूर्ण परिवार रत्नसंघ के प्रति समर्पित है। उनके चाचा श्री जवाहरलाल जी बाघमार, श्री बंशीलाल जी बाघमार आदि की सेवाएँ संघ को निरन्तर प्राप्त हो रही है। *-ताराचन्द जैन*

**उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।**

# साभार-प्राप्ति-स्वीकार

## 5000/- विदेश में आजीवन-सदस्यता हेतु

131 (F) Mr. Shailesh ji Mehta, Abu Dhabi (U.A.E.)
132 (F) Mr. Yogesh ji Jain, Hong Kong

## 500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

11799 श्री मानिक चन्द जी बैद, चरचाकालरी, कोरिया
11800 श्री इन्द्रकुमार जी पुंगलिया, जवाहर नगर, जयपुर
11801 Shri K. Gautam Chand ji Shri Shrimal, Shimoga
11815 श्रीमती वन्दना जी खींचा, आशीर्वाद कॉम्पलेक्स, भटार, सूरत
11816 श्री सुनील कुमार खवाड़, जड़ियों का रास्ता, एस.एम.एस. हाईवे रोड़, जयपुर
11817 श्री योगेश जी पितलिया (जैन), मोगड़ीवालों की बगीची के पास, ब्रह्मपुरी रोड़, जयपुर

## श्री आर. पदमचन्द जी बाघमार, चेन्नई के सौजन्य से

11802 श्री विजेन्द्र कुमार जैन (आगरा वाले), वर्धमान नगर, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11803 श्री देवेन्द्र कुमार जी जैन, जैन मंदिर के सामने, वर्धमान नगर, हिण्डौनसिटी, करौली
11804 श्री दयानन्द जी जैन, मोहन नगर, हिण्डौनसिटी, करौली
11805 श्री निर्मल कुमार जी जैन, मोहन नगर, हिण्डौनसिटी, करौली
11806 श्री त्रिलोकचन्द जी जैन (बिजली वाले), जैन कॉलोनी, हिण्डौनसिटी, करौली
11807 श्री अनूपचन्द जी जैन, मंडी शिवालय के पास, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11808 श्री देवीलाल जी (निसुरे वाले), वर्धमान नगर, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11809 श्री गोपाल जी सिंघल, जैन स्थानक के सामने, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11810 श्री रिखबचन्द जी जैन, भगवती नगर, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11811 श्री राजेन्द्र जी गोयल, जैन स्थानक के सामने, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11812 श्री प्रेमचन्द जी जैन, द्वारा : चंचल किराना स्टोर, अन्ता, बांरा (राजस्थान)
11813 श्री अशोक जी जैन (फूलवाडा वाले), वर्धमान नगर, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11814 श्री अशोक कुमार जी जैन, जगदम्बा कॉलोनी, केशव स्कूल के पास, जयपुर (राजस्थान)

## जिनवाणी हेतु साभार

2100/- श्री सोहनलाल जी. गौतमचन्द जी हुण्डीवाल (कांकरिया) चैन्नई, सौ. का. आरती सुपुत्री श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल का शुभ परिणय चि. श्री विक्रम जी सुपुत्र श्री पुखराज सा दुगड चैन्नई के साथ दिनांक 24.11.2008 को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2000/- श्री सम्पतराज जी बाफना (भोपालगढ़ वाले) न्यू पॉवर हाउस रोड़, जोधपुर

1100/- श्री जवाहरलाल जी बाघमार (कोसाणा वाले), चेन्नई, अपने भतीजे श्री राकेश कुमार

जी सुपुत्र श्री भंवरलाल जी बाघमार (कोसाणा वाले) का 37 वर्ष की अल्पायु में दिनांक 13/12/2008 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

501/- श्री पदमचन्द जी जैन, सवाईमाधोपुर, अपने सुपुत्र चि. प्रकाश जी जैन का शुभ विवाह दिनांक 22/11/2008 को सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

501/- श्री प्रवीण कुमार जी, विनोद कुमार जी जैन (पुसेदा वाले), बजरिया-सवाईमाधोपुर, अपने पूज्य पिताजी श्रीमान् छीतरमल जी जैन (पुसेदा वाले) का दिनांक 10/12/2008 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

501/- श्रीमती सुशीला जी एवं श्री भवरलाल जी भण्डारी, जोधपुर, अपने पौत्र रत्न एवं श्रीमती पूनमजी व संजय जी भण्डारी के पुत्र रत्न प्राप्ति के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री कन्हैयालाल जी जैन, भीलवाड़ा, अपने सुपुत्र चि. पकंज संग रेणु एवं दिलीप संग सरिता का शुभ विवाह सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में भेंट।

500/- श्री नौरतन जी, कुशल जी, टीकम जी, राजेन्द्र जी, धर्मचन्द जी मेहता, जोधपुर, अपनी माताश्री पारसकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री ताराचन्द जी मेहता की पांचवी पुण्य स्मृति पर भेंट।

500/- श्री कंवरलाल जी कोठारी, अजमेर, अपनी सुपुत्री श्रीमती सुनीता जी पिछोलिया धर्मपत्नी श्री रवि जी पिछोलिया का 40 वर्ष की अल्पायु में दिनांक 3/11/2008 को स्वर्गवास हो जाने पर पुण्यस्मृति में भेंट।

500/- श्री रवि जी पिछोलिया, भीलवाड़ा, अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुनीता जी पिछोलिया का 40 वर्ष की अल्पायु में दिनांक 3/11/2008 को स्वर्गवास हो जाने पर पुण्यस्मृति में।

## जीवदया हेतु साभार

1100/- श्री सिद्धित,स्मृति, अदिति, अद्विजा व आनिया मेहता, जोधपुर, अपने दादा-दादी (श्री कंवलराज जी व सुशीला जी मेहता) के वैवाहिक जीवन के सफलतम 50 वर्ष दिनांक 13.12.2008 को सानन्द पूर्ण करने व साध्वी प्रमुखा पूज्य मैनासुन्दरी जी म.सा. के दर्शन-वन्दन कर लाभ प्राप्त करने के उपलक्ष्य में भेंट।

1001/- श्री कपूरचन्द जी जैन, डॉ. राजेन्द्र कुमार जी जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर, चि. प्रशान्त का शुभ विवाह दिनांक 12/12/2008 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1000/- श्री दिनेश कुमार जी, श्रीमती संगीता बाई जी कोठारी, (रायपुर वाले) बैंगलोर।

500/- श्री अमरचन्द जी संचेती, ब्यावर, चि. प्रिंस जी संचेती की 9वीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री सुरेश जी भण्डारी, ब्रह्मपुरी, महामन्दिर, जोधपुर द्वारा सहायतार्थ

## आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड को प्राप्त साभार

2200/- श्रीमती देवबाला राजेन्द्र जी भण्डारी-मुम्बई

2200/- श्रीमती देवबाला राजेन्द्र जी भण्डारी-मुम्बई

2200/- श्रीमती मंजु दिलीप जी जैन-मुम्बई

2200/- श्रीमती अभिलाषा अजय जी हीरावत-मुम्बई

2200/- श्रीमती हेमलता मदनजी सांखला- मुम्बई

2200/- श्रीमती पिंकी अनिल जी सुराणा-मुम्बई

2200/- श्रीमती बसंती दिलखुश जी जैन-मुम्बई

2200/- श्रीमती मंजु रतनराज जी भंडारी-मुम्बई

2100/- श्रीमती बादरदेवी टोडरमल जी कटारिया-इंदौर

2001/- श्री जैन संघ, कडलुर (तमिलनाडू)

2000/- श्री संपतराज जी बाफना (भोपालगढ़ वाले)-जोधपुर

## श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार सहयोग

5100/- श्री वर्धमान स्थानकवासी श्रावक संघ, केकड़ी (राज.)।

3000/- श्री सोहनलाल जी. गौतमचन्द जी हुण्डीवाल (कांकरिया) चैन्नई, सौ. का. आरती सुपुत्री श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल का शुभ परिणय चि. श्री विक्रम जी सुपुत्र श्री पुखराज सा दुगड चैन्नई के साथ दिनॉक 24.11.2008 को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2000/- श्री सम्पतराज जी सा बाफना (भोपालगढ़ वाले) न्यू पॉवर हाउस रोड़, जोधपुर।

500/- श्री विजयराज जी मुथा, आलन्दुर (तमिलनाडू)।

### स्वाध्याय संघ शाखा बजरिया को प्राप्त सहायतार्थ

1001/- श्री कपूरचन्द जी जैन, डॉ. राजेन्द्र जी जैन (सूरनाल वाले) से चि. प्रशान्त जैन के विवाहोपलक्ष्य में जीव दया हेतु भेंट।

---

## आगामी पर्व

| | | |
|---|---|---|
| माघ कृष्णा 4 | बुधवार, 14.01.2009 | उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. का 75 वां जन्म-दिवस |
| माघ कृष्णा 8 | रविवार, 18.01.2009 | अष्टमी |
| माघ कृष्णा 14 | रविवार, 25.01.2009 | चतुर्दशी, पक्खी |
| माघ शुक्ला 2 | बुधवार, 28.01.2009 | आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. 89 वां दीक्षा-दिवस। |
| माघ शुक्ला 8 | मंगलवार, 03.02.2009 | अष्टमी |
| माघ शुक्ला 14 | रविवार, 08.02.2009 | चतुर्दशी |
| माघ शुक्ला 15 | सोमवार, 09.02.2009 | पक्खी |

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अनूठा दान छात्रवृत्ति का
जीवन बनता एक विद्यार्थी का

With Best Compliments From :

**SURANA**
**INDUSTRIES LIMITED**

SIL

Manufacturers & Exporters of

**Symbolises the Aspiration of Discerning Steel Buyers !**

**Premium Quality Steels, viz., HSD/CTD Bars, MS Rounds Structurals Like Flats, Channels Angles and Squares**

**Always Use SURANA STEELS to**
***Highlight your House/Industry***

**Regd. Cum Corporate Head Office**
29, Whites Road, II Floor Royapettah, Chennai-600 014
Grams : **GURUHASTI**
Phone : 28525127 (3 Lines) Fax : 044 28521143
E-mail : suranast@vsnl.com
Website : www.suranaind.com

**Works**

F-67, 68 & 69 SIPCOT Industrial Complex
Gummidipoondi 601 201, Tiruvallur Dist. Tamilnadu
Ph.: 954119 222881 Telefax : 954119222880

**Sales Yard**

30, G.N.T. Road, Madhavaram, Chennai 600 110
Ph.: 25375531/32/33 Fax : 044 25375400

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।।

*With Best Compliments From :*

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

**पारसमल सुरेशचन्द कोठारी**

प्रतिष्ठान

# KOTHARI FINANCERS

27, Chandrappan Street
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 42738436, 25298130

BRANCHES :

**Bhagawan Motors**
Chennai-53, Ph. 26251960

**Bhagawan Cars**
Chennai-53, Ph. 26243455/56

**Balalji Motors**
Chennai-50, Ph. 26247077

**Padmavati Motors**
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

ज्ञान का एक दीया जलाइये
सहयोग के लिए आगे आइए
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का
लाभ उठाकर आनन्द पाईये

आदरणीय रत्न बन्धुवर

छात्रवृत्ति योजना में एक छात्र के लिए Rs. 12,000 के गुणक में दान राशि "Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund" योजना के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट (Donations to Gajendra Nidhi are Exempt u/s 80G of Income Tax Act, 1961) से निम्नांकित पते पर भेंजे, पुण्यधन कमाइऐं।

**Ashok Kavad**
**PRITHVI EXCHANGE**
33, Montieth Road, Egmore, CHENNAI-600008
Tele Fax 044-43434249, 09381041097

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

# GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)

**22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !**

**No. 4 Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056**
**Ph. 044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588**

Guru Hasti Bankers :

# P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

N0. 5, Car Street,
Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 26272906, 55689588

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.
Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

# रत्नसंघ की विभिन्न संस्थाओं के प्रमुख पदाधिकारी

1. **संयोजक-संरक्षक मण्डल** 022-30645000/23648004
श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई

2. **संयोजक-शासन सेवा समिति**
श्रीमान् रतनलाल सी. बाफना, जलगाँव 0257-2225903/09823076551

3. **गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन**
अध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी कोठारी, मुम्बई 022-23673939/23698880

4. **अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर** **0291-2636763**
अध्यक्ष-श्रीमान् सुमेरसिंह जी बोथरा, जयपुर 0141-2620571
09414048830/09314048830
कार्याध्यक्ष-श्रीमान् ज्ञानेन्द्र जी बाफना, जोधपुर 0291-2434355/09414093147
महामंत्री-श्रीमान् नवरतन जी डागा, जोधपुर 0291-2654427/09828032215

5. **सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर** **0141-2575997, 2570753**
अध्यक्ष-श्रीमान् पी. शिखरमल जी सुराणा, चेन्नई 044-25380387/25391597
09884430000
कार्याध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी भंसाली, बैंगलोर 080-22265957/09844158943
कार्याध्यक्ष-श्रीमान् आनन्द जी चौपड़ा, जयपुर 0141-3233318/09414090931
मंत्री- श्रीमान् प्रेमचन्द जी जैन, जयपुर 0141-2212982/09413453774

6. **अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर** **0291-2636763**
अध्यक्ष-श्रीमती (डॉ.) मंजुला जी बम्ब, जयपुर 0141-2362692/09314292229
कार्याध्यक्ष-श्रीमती मधु जी सुराणा, चेन्नई 044-25293001/42765646
मंत्री-श्रीमती आशा जी गांग, जोधपुर 0291-2544124/9314044124

7. **अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर** **0291-2641445**
अध्यक्ष-श्रीमान् कुशल जी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर 07462-233550/09460441570
कार्याध्यक्ष-श्रीमान् प्रमोद जी हीरावत, जयपुर 0141-2742665/09314507303
कार्याध्यक्ष-श्रीमान् बुधमल जी बोहरा, चेन्नई 044-26425093/09444235065
महासचिव-श्रीमान् महेन्द्र जी सुराणा, जोधपुर 0291-2546501/09414921164

8. **श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर** **0291-2624891**
संयोजक-श्रीमान् चंचलमल जी चोरडिया, जोधपुर 0291-2621454/09414134606
सचिव-श्रीमती मोहनकौर जी जैन, जोधपुर 0291-3296033/09351590014

9. **अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर** **0291-2630490**
संयोजक-श्रीमती सुशीला जी बोहरा, जोधपुर 0291-5108799/09414133879
सचिव-श्रीमान् राजेश जी कर्णावट, जोधपुर 0291-2549925/09414128925

10. **अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर** **0291-2622623**
संयोजक-श्रीमती विमला जी मेहता, जोधपुर 0291-2435637/09351421637
सचिव-श्रीमान् सुभाष जी हुण्डीवाल, जोधपुर 0291-2555230/09460551096

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

# प्यास बुझाये, कर्म कटाये
# फिर क्यों न अपनायें
# धोवन पानी

*With best compliments from :*

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

**S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)**
098407 18382
2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

**APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD**
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

**APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.**
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

**SAPNA PACKAGING INDUSTRIES**
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

**PENINSULAR PACKAGINGS**
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 1 ★ मूल्य : 10 रु.
10 जनवरी, 2009 ★ पौष 2065

# धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

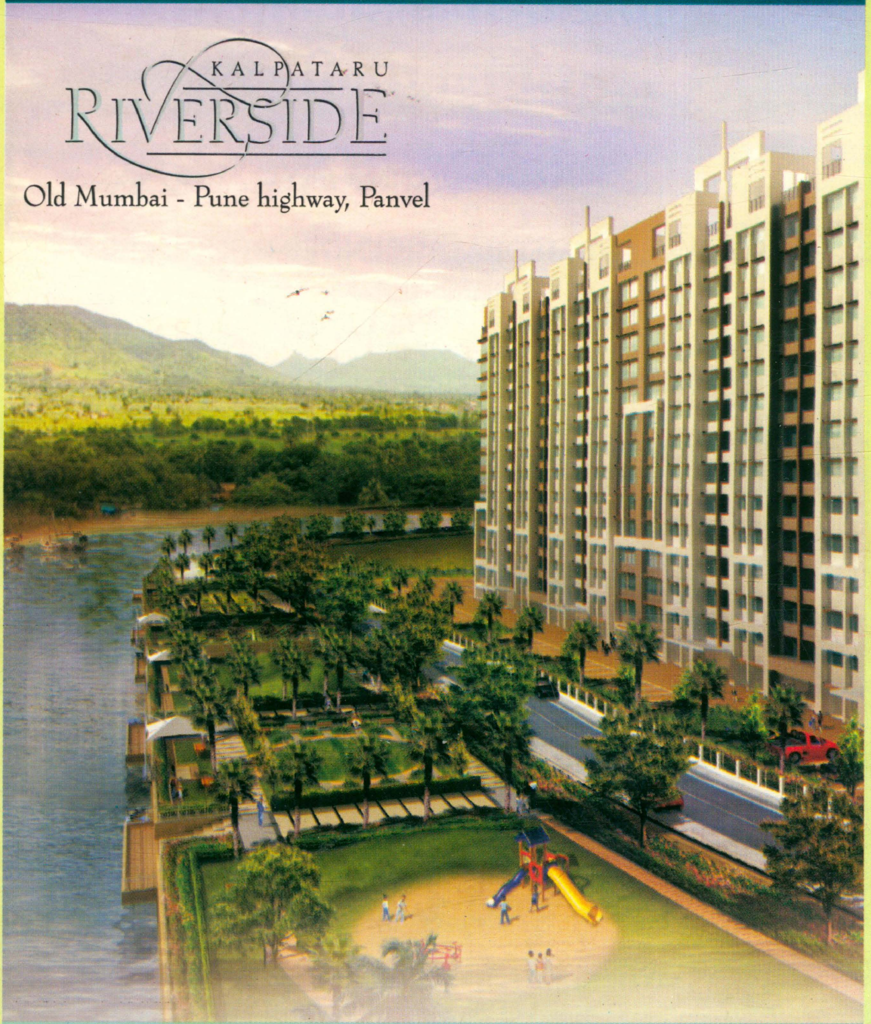


KALPA-TARU

101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East),
Mumbai - 400 055. • Tel.: 3064 3065, 98339 45470 • Fax: 3064 3131
Website: www.kalpataru.com

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।